महाबली भीम

महाबली भीम

लेखक
सन्तराम वत्स्य

गोविन्दराम हासानन्द दिल्ली-६

मूल्य : १०.००

प्रकाशक : गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८, नई सड़क, दिल्ली-६ /
संस्करण : १९८९ / मुद्रक : अजय प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा,
दिल्ली-११००३२ / © सुबोध

MAHABALI BHIM by Santram Vatsya

भीमसेन का बचपन

महाराज पाण्डु की दो रानियाँ थीं—कुन्ती और माद्री। उनके कोई सन्तान नहीं थी। वे जीवन से निराश होकर वन में निवास कर रहे थे। यहीं पर उनके पाँच पुत्र हुए। कुन्ती से तीन—युधिष्ठिर, भीमसेन और अर्जुन। माद्री से दो—नकुल और सहदेव।

जिस समय कुन्ती ने अपने दूसरे पुत्र भीमसेन को जन्म दिया तो आकाशवाणी हुई कि "यह बालक बड़ा होकर वीरों में सर्वश्रेष्ठ गिना जायेगा।"

भीमसेन के जन्म से कुछ दिन बाद भीमसेन को गोद में लिये कुन्ती देवपूजा के लिए जा रही थीं। इतने में एक भूखा बाघ दहाड़ता हुआ कुन्ती की ओर लपका। महाराज पाण्डु भी साथ ही थे। उन्होंने बाघ को एक के बाद एक तीन बाण मारकर चित कर दिया, किन्तु बाघ की दहाड़ से डरी हुई कुन्ती ने ज्यों ही भागने का प्रयत्न किया, गोद में लिया हुआ बालक भीम नीचे एक शिला पर गिर पड़ा। किन्तु आश्चर्य ! बजाय इसके कि शिला पर गिरने से भीम

को चोट लगती, वह शिला ही चूर-चूर हो गई जैसे किसी ने उसपर हथौड़ा मारा हो।

संयोग की बात है कि जिस दिन भीम का जन्म हुआ, उसी दिन पाण्डु के बड़े भाई धृतराष्ट्र की पत्नी गान्धारी ने हस्तिनापुर में दुर्योधन को जन्म दिया।

राजा पाण्डु की मृत्यु होने पर उनकी छोटी रानी माद्री तो उन्हीं के साथ सती हो गई, पर कुन्ती पाँचों बालकों की देखरेख के लिए, ऋषियों के समझाने-बुझाने पर जीवित रह गई।

छोटे-छोटे पाँच बच्चों के साथ वन में रहना उचित नहीं था। इसलिए कुन्ती हस्तिनापुर में आ गई और अपने जेठ धृतराष्ट्र के संरक्षण में रहने लगी।

राजा धृतराष्ट्र के सौ पुत्र थे। इनमें दुर्योधन सबसे बड़ा था। दुर्योधन से छोटा दुःशासन था। धृतराष्ट्र के सौ पुत्र कौरव कहलाते थे तथा पाण्डु के पाँचों पुत्र पाण्डव। हस्तिनापुर में कौरव तथा पाण्डव पलने और बढ़ने लगे। कौरव और पाण्डव मिलकर खेलते। ये एक सौ पाँच बालक जब धमा-चौकड़ी मचाते, लुका-छिपी करते, एक-दूसरे के पीछे भागते तो महलों में हुड़दंग-सा मच जाता। दौड़ में, धक्का-मुक्की में, खाने-पीने में भीम का कोई भी सामना नहीं कर सकता था। भीम सबसे बढ़-चढ़कर शरारती था। वह किन्हीं दो

भाइयों को पकड़ता और दोनों के सिरों को एक-दूसरे से टकरा देता। दोनों के सिरों में गुम्मट निकल आते और वे उन्हें दिखाते हुए भीम की शिकायत करते। कभी कौरव जब भीम की हरकतों से दुःखी हो जाते तो मिलकर उससे भिड़ जाते, पर वह तो अकेला ही उन सबको भारी मालूम होता। कभी नदी में इकट्ठे नहाने चले जाते तो भीम कौरवों को पकड़कर देर तक पानी में डुबाए रखता। उनका दम घुट जाता और पानी मुँह में चला जाता। जब वे फल तोड़ने के लिए पेड़ों पर चढ़ते तो भीमसेन उन शाखाओं को पकड़कर जोर से हिला देता, जिससे वे इस प्रकार नीचे गिर पड़ते जैसे कोई फल गिरा हो। भीम को जब देखो तब वह अपने शैतान स्वभाव के कारण कौरवों को छकाने में लगा रहता।

भीमसेन से बार-बार सताए जाकर कौरव बड़ा दुःख पाते, पर फिर भी भीम का कुछ नहीं बिगाड़ पाते और मन में कुढ़ते रहते। खेल-खेल की यह शत्रुता रंग लाई। दुर्योधन के मन में यह बात जमकर बैठ गई कि यह भीमसेन जो अभी हम सबके काबू में नहीं आता है, बड़ा होकर हमें सुख-चैन से जीने नहीं देगा। वह अपने छोटे भाइयों से एकान्त में बैठकर बात करता कि किसी तरह इस भीम को ठिकाने लगाया जाय।

दुर्योधन ने भीमसेन को विष खिलाकर गंगा में फेंक दिया

दुर्योधन ने भीम से निबटने के लिए एक योजना बनाई। यह निश्चय हुआ कि सभी कुमार गंगा-तट पर जल-विहार करने जाएँगे। गंगा के तट पर राज-कुमारों के लिए तम्बू ताने गए। खाने-पीने की चीजें पहुँचाई गईं। दुर्योधन के कहने से सभी कौरव और पाण्डव रथों में बैठकर वहाँ जल-विहार के लिए पहुँचे। भोजन का समय हो गया। सभी खाने-पीने लगे। इस जल-विहार के कार्यक्रम से सभी मनमौजी बने हुए थे। वे एक-दूसरे के मुँह में मिष्ठान्न और पकवान ठूँसने लगे। हँसी के कहकहों, धींगामुश्ती, छेड़छाड़ और मजाक से सारा वातावरण गूँज रहा था। भीमसेन तो सबसे बड़ा पेटू था। दुर्योधन ने कहा, "इसे आज मैं अपने हाथ से भरपेट मिठाइयाँ और पकवान खिलाऊँगा। देखता हूँ यह कितना खाता है!" यों हँसी-मजाक की आड़ लेकर दुर्योधन ने पहले से ही जहर मिलाकर बनाए लड्डू भीमसेन को खिला दिए। दुर्योधन खिलाता जाता और भीमसेन खाता जाता। भीमसेन को क्या पता था कि उसे मिठाई में जहर खिलाया जा रहा है! भीम तो दोनों हाथों से खाता जाता था।

खा-पीकर सब राजकुमार नदी में उतरे और जल-क्रीड़ा करने लगे। एक-दूसरे को छींटे मारते, तैरकर एक-दूसरे के पीछे दौड़ते। जब नहाते-तैरते साँझ उतर आयी तो बाहर निकले। बढ़िया-बढ़िया गहने-कपड़े पहने और थोड़ी देर गप-शप करके थके होने के कारण जल्द ही अपने-अपने तम्बुओं में सोने चले गये। भीमसेन एक तो थका हुआ था और जहर का भी कुछ असर था, उसे सोते ही बेहोशी जैसी गहरी नींद आ गई। दुर्योधन ने अपने भाइयों की सहायता से पास के जंगल से बहुत-सी बेलें मँगाईं और उनसे भीम को अच्छी तरह लपेटकर गंगा-तट के एक ऊँचे कगार से मुर्दे की तरह अचेत भीम को गंगाजल में फेंक दिया। पानी में बहते भीम को जल-सर्पों ने कई जगह से काटा। कहते हैं जहर की दवा भी जहर है। सर्पों के जहर ने मिठाई में मिले जहर के प्रभाव को नष्ट कर दिया। भीम की बेहोशी दूर हुई तो उसने अपने को लता-जाल में बँधा पाया। किसी तरह हाथ-पैर मारकर भीमसेन ने बेलों के जाल को तोड़कर अपने को मुक्त किया। फिर तो मुर्दा समझकर काटनेवाले सर्प भी भाग खड़े हुए।

गंगा-तट से दूसरे दिन कौरव और पाण्डव वापस हस्तिनापुर लौट आये। भीमसेन के बारे में पाण्डवों ने

समझा कि वह हमसे पहले ही चला गया होगा। पर जब हस्तिनापुर पहुँचकर वे माँ कुन्ती को प्रणाम करने गये और पूछा कि भीमसेन पहुँच गया है या नहीं, तो कुन्ती ने बताया कि वह तो यहाँ नहीं पहुँचा है। तब सबको चिन्ता हुई। युधिष्ठिर के मुँह से जब अचानक यह बात निकल गई कि उसे किसी ने मार तो नहीं डाला, तब कुन्ती रो पड़ी और उसने चारों पाण्डवों को भीमसेन को खोजने के लिए भेजा। साथ ही उसने महात्मा विदुर को बुला भेजा और उन्हें बताया कि भीमसेन नहीं मिल रहा है। कुन्ती ने इस विषय में दुर्योधन पर अपना सन्देह भी प्रकट किया। विदुर जी ने कुन्ती को धीरज बँधाया और समझाया कि वह दुर्योधन पर अपने सन्देह की बात किसी से न कहे, नहीं तो वह दुष्ट तुम्हारे अन्य पुत्रों के प्राणों का भी ग्राहक बन जाएगा।

कुछ दिन बाद भीमसेन वापस हस्तिनापुर आ पहुँचा तो कुन्ती की जान में जान आई। भीम को अपने बीच पाकर सभी पाण्डव फिर से प्रसन्न नजर आए। भीमसेन ने दुर्योधन की सारी करतूतें उन्हें बताईं। युधिष्ठिर ने भीमसेन को समझाया कि वह दुर्योधन की नीच करतूतों की बात किसी से न करे। उसके बाद पाँचों पाण्डव और माता कुन्ती सावधान

रहने लगे।

उधर दुर्योधन, दुःशासन और उनका मामा शकुनि पाण्डवों को मार डालने के नये-नये उपाय सोचने लगे।

कौरव और पाण्डव दिन-भर खेलते-कूदते रहते और एक-दूसरे से लड़ते-झगड़ते भी। राजा धृतराष्ट्र दिन-भर एक-दूसरे की शिकायतें सुनते-सुनते तंग आ गये। उन्होंने इनकी उद्दण्डता को दूर करने के लिए कृपाचार्य को बुला भेजा और राजकुमारों को शिक्षा देने का कार्य उन्हें सौंप दिया। बाद में कृपाचार्य के बहनोई द्रोणाचार्य की नियुक्ति, भीष्म पितामह ने कौरवों और पाण्डवों को शस्त्रास्त्रों की शिक्षा देने के लिए की। द्रोणाचार्य उस समय युद्ध-विद्या के सबसे बड़े पण्डित थे। द्रोणाचार्य और कृपाचार्य से शिक्षा पाकर कौरव और पाण्डव युद्ध-विद्या में कुशलता प्राप्त करने लगे। भीमसेन गदा-युद्ध में सबसे बढ़-चढ़कर था। गदा-युद्ध में भीमसेन की टक्कर का कोई दूसरा था तो दुर्योधन था।

जब कौरवों-पाण्डवों की शस्त्रास्त्र-शिक्षा पूर्ण हुई तो एक बड़े समारोह का आयोजन किया गया जिसमें सभी राजकुमारों ने अपने-अपने युद्ध-कौशल का प्रदर्शन किया। दुर्योधन और भीमसेन में गदा-युद्ध का मुकाबला हुआ। दर्शकों की भीड़ में से आधे दुर्योधन के गदा-

युद्ध के प्रशंसक थे और आधे भीमसेन के। दोनों पक्ष दुर्योधन और भीमसेन को बढ़ावा दे रहे थे। जब आचार्य द्रोण को लगा कि गदा-युद्ध का प्रदर्शन सचमुच के युद्ध में बदल जाएगा तो उन्होंने अपने पुत्र अश्वत्थामा को भेजकर दोनों को प्रदर्शन बन्द करने की आज्ञा सुनाई। तब दोनों ने गदा-युद्ध बन्द किया।

बाद में राजा धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को युवराज के पद पर अभिषिक्त कर दिया। भीम अब कृष्ण के बड़े भाई बलराम से, जो बड़े भारी योद्धा थे, खड्ग-युद्ध, गदा-युद्ध और रथ-युद्ध की शिक्षा लेने लगे।

लाख का घर

पाँचों पाण्डव हस्तिनापुर की प्रजा में बड़े लोकप्रिय थे। युवराज युधिष्ठिर तो अपने गुणों के कारण क्या राजकर्मचारी और क्या प्रजा, सबको ही अच्छे लगते थे। पाण्डवों की इस लोकप्रियता से दुर्योधन बहुत चिन्तित था। अब यदि वह पाण्डवों को मरवाता तो प्रजा उसके विरुद्ध हो जाती। इसलिए उसने एक ऐसी योजना बनाई कि पहले तो पाण्डवों को राजधानी

से बाहर भेज दिया जाए और फिर वहीं पर कुछ समय बाद मरवा डाला जाय, ताकि किसी को सन्देह न हो और प्रजा समझे कि दुर्घटना में पाण्डवों की मृत्यु हुई है। उसने पुरोचन नामक अपने एक विश्वस्त व्यक्ति को भेजकर वारणावत नामक स्थान में लाख आदि तुरन्त आग पकड़नेवाली चीजों को मसाले में मिलाकर एक भवन बनवाया। फिर धृतराष्ट्र ने पाण्डवों से कहा, "वारणावत बड़ा सुन्दर स्थान तो है ही, तीर्थस्थान भी है। वहाँ एक बड़ा मेला लगा हुआ है। आप चाहें तो कुछ दिन वहाँ जाकर रहें।"

पाण्डवों ने राजा के सुझाव को ही उनकी आज्ञा समझा और माता कुन्ती सहित वहाँ के लिए प्रस्थान किया। पाण्डवों को इस तरह वहाँ भेजे जाने से सन्देह तो हो रहा था कि दाल में जरूर कुछ काला है। पाण्डवों को विदा करने गये हुए बाकी सब लोग तो लौट आये, पर महात्मा विदुर साथ चलते रहे और युधिष्ठिर से एक म्लेच्छ भाषा में, जिसे पाण्डवों में केवल युधिष्ठिर जानता था, बोले, "शत्रु ने तुम्हारे लिए ऐसा भवन तैयार किया है जिसमें लाख आदि तुरन्त आग पकड़ने वाले पदार्थों का प्रयोग हुआ है। इसलिए तुम उस भवन से बाहर निकलने के लिए एक सुरंग बनवाना और सुरंग से बाहर के रास्तों और

स्थानों की अच्छी तरह जानकारी प्राप्त कर लेना, ताकि जिस समय सुरंग से भागकर जाओ तो कठिनाई न हो।"

युधिष्ठिर ने कहा—"मैंने आपकी बात ठीक तरह समझ ली है। मैं आपके कहने के अनुसार ही सारा कार्य करूँगा।"

विदुर जी लौट गये तो कुन्ती ने युधिष्ठिर के पास आकर पूछा, "बेटा, अटपटी-सी बोली में विदुर तुमसे क्या कह रहे थे ?" युधिष्ठिर ने सारी बात माँ को बता दी।

वारणावत के नागरिकों ने पाण्डवों का खूब स्वागत किया। भवन का निर्माण करनेवाला और व्यवस्थापक पुरोचन उन्हें बड़े आदर के साथ लाख के भवन में ले गया। जब पाण्डव उस भवन में रहने लगे तो उन्हें उस भवन की दीवारों से लाख, चर्बी और घी की गन्ध आती थी। भीमसेन का कहना था, "हमें इस घर में एक दिन भी नहीं रहना चाहिए।" पर युधिष्ठिर बोला, "हमें यहाँ रहकर ही शत्रुओं की चाल को बेकार कर देना चाहिए।"

कुछ महीनों बाद विदुरजी ने हस्तिनापुर से सुरंग खोदनेवाला एक कारीगर भेजा। उसने भवन से बाहर निकलने के लिए एक बहुत बड़ी सुरंग तैयार कर दी।

एक रात पाण्डवों ने अपने महल में आग लगा दी और सुरंग के रास्ते से बाहर निकल गये। हाँ, इस भवन को बनवानेवाला और इसकी व्यवस्था करने-वाला—पापी पुरोचन भी जलकर राख हो गया।

पाण्डव सुरंग से निकलकर गंगा के किनारे जा पहुँचे। वहाँ पहले से ही उन्हें पार ले-जाने के लिए एक नाव तैयार खड़ी थी। सभी ने गंगा पार की और आगे के घने जंगल में जा घुसे ताकि किसी को पाण्डवों के जीवित बच निकलने का पता न चले।

भवन में आग लगने और उस आग में कुन्ती सहित पाँचों पाण्डवों के जलने का समाचार हस्तिनापुर पहुँचा तो राजा धृतराष्ट्र बहुत रोए। दुर्योधन अपने कपट-जाल की सफलता पर मन में खूब प्रसन्न था।

उधर पाण्डव अन्धेरी रात में थके-प्यासे उनींदे चले जा रहे थे। यह जंगल हिंसक पशुओं से भरा हुआ था; और इसमें न फूल थे न कन्द-मूल। माता कुन्ती को बड़े जोर से प्यास लग आई। वह बोली, "बेटा, प्यास के मारे बुरा हाल है। कहीं से पानी लाओ तो प्राण बचें।" सबको एक पीपल-पेड़ के नीचे छोड़कर भीमसेन पानी के लिए चला। जबतक वह सरोवर से पानी लेकर लौटा तो सभी सोए पड़े थे। काँटों-भरे जंगल में सभी भाइयों और माता को नंगी धरती पर

सोये देखकर भीमसेन के मन पर बड़ी ठेस लगी। भीमसेन ने उन्हें पानी के लिए जगाना ठीक नहीं समझा और स्वयं जागकर पहरा देने लगा ताकि कोई हिंसक पशु आक्रमण न कर बैठे।

राक्षस हिडिम्ब का वध और हिडिम्बा से भीम का विवाह

जहाँ पाण्डव सो रहे थे, उससे कुछ दूर शाल वृक्ष पर हिडिम्ब नाम का एक राक्षस रहता था। उसने सोए हुए पाण्डवों को देख लिया था और मनुष्य का मांस खाने की उसकी इच्छा जाग उठी थी। उसने अपनी बहन हिडिम्बा को कहा, "बहन! तुम जाओ और ये जो मनुष्य सोए पड़े हैं, इन्हें मारकर मेरे पास ले आओ। आज हम दोनों भरपेट मनुष्य-मांस खाएँगे।"

भाई के कहने से हिडिम्बा पाण्डवों के पास पहुँची। उसने पहरा देते महाबली विशालकाय भीमसेन को देखा और उसपर मुग्ध हो गई। उसने मन में निश्चय किया कि मैं तो इसी के साथ विवाह करूँगी। वह

सुन्दर युवती का रूप बनाकर भीमसेन के पास गई और बोली, "क्यों जी, आप कौन हैं और कहाँ से आए हैं? और ये सब जो यहाँ सोए पड़े हैं, ये तुम्हारे क्या लगते हैं? देखो न, कैसी गहरी नींद में सोए हैं! जैसे यह जंगल न होकर उनका सुरक्षित घर हो! इन्हें पता नहीं है कि यहाँ पास ही हिडिम्ब नाम का राक्षस भी रहता है! वह राक्षस मेरा भाई है और उसी ने मुझे इन्हें मार लाने के लिए भेजा है, पर मैं किसी को मारूँगी थोड़े ही। वीर! मुझे तो तुम बहुत ही अच्छे लग रहे हो। मैं तो तुम्हारे ही साथ विवाह करूँगी। बोलो, करोगे न मेरे साथ विवाह? 'हाँ' करो, नहीं तो मैं तुम्हारे सामने प्राण दे दूँगी।"

भीमसेन ने कहा, "अरी, तू पगली है जो बिना सोचे-समझे बोले जाती है! यह जो सोए पड़े हैं, इस ओर वाले मेरे बड़े भैया हैं और ये तीन छोटे। वे हमारी माता हैं। विवाह तो अभी बड़े भैया का ही नहीं हुआ तो मेरा पहले कैसे हो जाएगा? और सुनो, मैं तुम्हारे भाई-बाई से नहीं डरता हूँ। तुम रहो चाहे जाओ, मुझे किसी की परवाह नहीं।"

उधर हिडिम्बा को लौटकर आते न देखकर हिडिम्ब स्वयं यहाँ आ पहुँचा। उसकी जीभ तो मनुष्य-मांस खाने के लिए लपलपा रही थी। हिडिम्ब को

इधर ही आते देखकर हिडिम्बा ने भीमसेन से कहा, "इन सबको जगा दो तो मैं आप सबको उठाकर सुरक्षित स्थान पर ले जाऊँ।" पर भीम ने यह बात नहीं मानी। हिडिम्ब ने अपनी बहन को जब मानवी के रूप में भीमसेन से प्रेम की बातें करते देखा तो वह उसपर बहुत बिगड़ा। भीमसेन ने उसे ललकारते हुए कहा, "अरे पापी! इस स्त्री को क्या डरा रहा है? मेरे रहते तू इसका बाल भी बाँका नहीं कर सकता। आज तेरी मौत तुझे यहाँ खींच लाई है। आज के बाद इस जंगल में तेरा नाम भी कहीं सुनाई नहीं देगा।"

हिडिम्ब ने भीमसेन पर हमला कर दिया। इस झगड़े में माँ और भाइयों की नींद न उचट जाए, यह सोचकर भीमसेन हिडिम्ब को पकड़कर वहाँ से दूर ले गया और दोनों में घमासान युद्ध होने लगा। फिर भी उनके गर्जन से कुन्ती की नींद खुल गई। जागकर कुन्ती ने पास खड़ी हिडिम्बा को देखा तो उसका नाम-धाम पूछा। हिडिम्बा ने अपना परिचय देकर बताया कि उसके भाई और भीमसेन में घमासान युद्ध हो रहा है। इतने में चारों पाण्डव भी उठ खड़े हुए और भीमसेन के पास पहुँचे। कुछ देर के भयंकर युद्ध के पश्चात् भीम ने हिडिम्ब को मार डाला।

पाण्डव अभी अपने को प्रकट नहीं करना चाहते

थे। इसलिए वे प्रभात होने से पहले ही समीप के नगर में पहुँचकर डेरा डाल देना चाहते थे। वे सब चल पड़े तो हिडिम्बा भी उनके साथ-साथ चलती रही। वह तो मन में भीमसेन को अपना पति मान चुकी थी, पर भीमसेन राजी नहीं था। हिडिम्बा अब माँ कुन्ती और युधिष्ठिर से भीमसेन को विवाह के लिए राजी करने को कहने लगी। कुन्ती को बहू पसन्द आ गई। उसने युधिष्ठिर से सलाह की। युधिष्ठिर भी राजी हो गया। हाँ, एक शर्त जरूर लगा दी कि दिन-भर भीमसेन और हिडिम्बा चाहे जहाँ रहें, पर दिन छिपते ही हिडिम्बा भीमसेन को भाइयों और माता के पास पहुँचा दिया करे। शर्त हिडिम्बा ने स्वीकार कर ली और दोनों का विवाह हो गया। अब एक शर्त भीमसेन ने भी हिडिम्बा के सामने रखी कि तेरे जब एक पुत्र हो जाएगा तो मैं अलग रहने लगूँगा। यह शर्त भी हिडिम्बा ने स्वीकार कर ली।

कुछ समय बाद हिडिम्बा ने एक विकराल रूप वाले पुत्र को जन्म दिया। भीमसेन का यह पुत्र अपनी माँ राक्षसी के अनुरूप ही था। इसका नाम घटोत्कच रखा गया। शर्त के अनुसार अब भीमसेन और हिडिम्बा को अलग रहना था। जुदा होते समय हिडिम्बा ने कहा, "आप जब कभी भी मुझे याद करेंगे, मैं उसी

समय आपकी सेवा में उपस्थित हो जाऊँगी।" यही बात घटोत्कच ने भी कही और दोनों माँ-बेटा उत्तर दिशा की ओर चले गए।

बकासुर-वध

पाण्डव साधुवेश में इधर-उधर घूमते हुए एकचक्रा नगरी में आ पहुँचे। यहाँ उन्होंने एक ब्राह्मण के घर डेरा डाला। वे भिक्षा माँगकर गुजारा करने लगे। प्रतिदिन जितनी भिक्षा मिलती, उसका आधा भाग भीमसेन को भोजन के लिए दे दिया जाता और बाकी से चारों भाइयों और माँ का भोजन चलता।

एक दिन भीमसेन घर पर था और चारों भाई भीख माँगने गए हुए थे। जिस ब्राह्मण के घर में ये लोग रहते थे, उस परिवार के लोग धाड़ें मारकर रोने लगे। उनका रोना-चिल्लाना सुनकर कुन्ती का मन व्याकुल हो उठा। वह भीमसेन से बोली, "बेटा! इन ब्राह्मण देवता के घर में हम बड़े सुख से दिन काट रहे हैं। मैं चाहती हूँ कि इस उपकार का बदला चुकाने के लिए ब्राह्मण का कोई कार्य हम करें। मुझे लगता है

कि आज ब्राह्मण पर कोई विपत्ति आ पड़ी है। इस विपत्ति में यदि इसकी सहायता करें तो उपकार का बदला चुकाया जा सकता है।"

भीमसेन ने कहा, "माँ, पहले यह तो पता लगाओ कि इनपर क्या संकट आ पड़ा है? फिर दूर करने का उपाय भी करूँगा।"

कुन्ती ब्राह्मण-परिवार में गई और उनसे रोने का कारण पूछा। ब्राह्मण ने बताया, "यहाँ से दो कोस दूर एक नर-भक्षी बक नामक राक्षस रहता है। उसके लिए प्रतिदिन एक खारी भात, दो भैंसे और एक मनुष्य भेजा जाता है। आज हमारी बारी है। यदि हमने इस नियम का पालन नहीं किया तो वह राक्षस हमारे सारे परिवार को खा जाएगा। यदि मैं मरता हूँ तो परिवार के बाकी लोगों का पेट कौन पालेगा? ब्राह्मणी को भेजता हूँ तो घर उजड़ता है।"

कुन्ती ने ब्राह्मण को धीरज बँधाते हुए कहा, "ब्राह्मण देवता! आप जरा भी चिन्ता मत कीजिए। मेरे पाँच पुत्र हैं। इनमें से एक आपके बदले राक्षस को भोजन-सामग्री लेकर चला जाएगा।"

ब्राह्मण बोला, "कभी नहीं, मैं ऐसा कभी नहीं होने दूँगा। आप मेरे अतिथि हैं। मेरे पूज्य हैं। मैं आपके बेटे को बिल्कुल नहीं जाने दूँगा।"

कुन्ती बोली, "बात यह है कि वह राक्षस मेरे पुत्र का कुछ नहीं बिगाड़ सकता। यह उसी को मारकर वापस आएगा। एक तो बड़ा शूरवीर है, दूसरे इसे मन्त्र-सिद्धि का बल भी प्राप्त है। इसने पहले भी एक राक्षस को मारा है। पर मन्त्र की बात किसी दूसरे को मत बताना, नहीं तो लोग मन्त्र सीखने के लिए तंग करने लगेंगे।"

अब तो ब्राह्मण की सारी चिन्ता दूर हो गई। कुन्ती ने भीम को सारी बात बता दी तो भीम भात और भैंसे लेकर राक्षस के पास जाने को तैयार हो गया। इतने में बाकी भाई भी भिक्षा लेकर लौट आए। युधिष्ठिर को लगा कि भीम को राक्षस के पास भेजने की बात कहकर माँ ने ठीक नहीं किया। पर जब कुन्ती ने समझाया तो मान गया।

भीमसेन भोजन-सामग्री लेकर उस स्थान पर पहुँचा जहाँ राक्षस रहता था। वहाँ पहुँचकर भीमसेन ने राक्षस के लिए भेजे भात को ही खाना शुरू कर दिया। फिर वह राक्षस का नाम लेकर जोर-जोर से पुकारने लगा। भोजन में देर होने और नाम लेकर पुकारे जाने से राक्षस क्रोध में भरा हुआ अपनी गुफा से बाहर निकला, तो उसने भीम को अपने हिस्से का भात खाते देखा। क्रोध में भरा राक्षस जब गर्जता

हुआ भीम के पास पहुँचा तो भीम ने लापरवाही से पीठ उसकी ओर कर दी और पहले ही की तरह भात खाता रहा। राक्षस ने भीमसेन की पीठ पर घूँसों की बौछार शुरू कर दी। तब भी भीमसेन के कान पर जूं नहीं रेंगी और वह भोजन करता रहा। जब भात समाप्त हो गया तो भीम हाथ-मुँह धोकर, डकार मारता हुआ राक्षस से भिड़ने के लिए आ डटा। दोनों में बड़ी देर तक हाथापाई होती रही। अन्त में भीमसेन ने राक्षस को ऊपर उठाकर धरती पर पटक दिया और घुटने से उसकी पीठ को दबाकर, दाहिने हाथ से उसकी गर्दन पकड़ ली और बाएँ हाथ से कमर के लंगोट को पकड़कर दुहरा मोड़ दिया। इस तरह उस राक्षस की कमर टूट गई। लहू की कै करते हुए राक्षस ने दम तोड़ दिया।

अब भीमसेन ने उस राक्षस की विशाल लाश को उठाया और नगर के मुख्य द्वार पर जा पटका, जिससे लोग अपनी आँखों से उसे मरा हुआ देखकर निर्भय हो जाएँ।

इस राक्षस को मारनेवाला वीर कौन है, इस बात का पता लगाने के लिए नगर-निवासी उस ब्राह्मण के घर पहुँचे, जिसकी उस दिन बारी थी। उसने कुन्ती के मना करने के कारण झूठ-मूठ कह दिया कि हमें

रोता-बिलखता देखकर कोई अज्ञात मन्त्र-सिद्ध ब्राह्मण आया और उसी ने इस दुष्ट राक्षस को मारा है।

द्रौपदी-स्वयंवर

यहाँ से पाण्डव द्रौपदी के स्वयंवर की बात सुनकर द्रुपद के राज्य पांचाल देश को चले। वहाँ वे द्रौपदी के स्वयंवर में सम्मिलित हुए और साधुवेश-धारी अर्जुन ने स्वयंवर में लक्ष्यवेध करके द्रौपदी को जीत लिया। पर ब्राह्मण-वेशधारी अर्जुन के क्षत्रिय कन्या को जीतने का कुछ राजा विरोध करने लगे और झगड़ा शुरू हो गया। भीम और अर्जुन धनुष-बाण लेकर खड़े हुए तो उपद्रवी राजा भाग खड़े हुए।

द्रौपदी पाँचों पाण्डवों की पत्नी बनी। अब यह भेद भी खुल गया कि ये तो पाण्डव हैं। द्रौपदी और दहेज के सामान सहित पाण्डव हस्तिनापुर लौटे तो उनका खूब स्वागत हुआ। धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को आधा राज्य देकर, राज्याभिषेक सम्पन्न किया और सलाह दी कि दुष्ट दुर्योधन कोई झगड़ा न करे, इसलिए खाण्डवप्रस्थ में जाकर रहो और वहीं से राज्य-शासन

की व्यवस्था करो।

पाण्डवों की अपनी राजधानी बनने पर खाण्डव-प्रस्थ का नाम इन्द्रप्रस्थ रखा गया। राजधानी इन्द्रप्रस्थ की सम्पत्ति और समृद्धि दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करने लगी। मयासुर ने यहाँ अनेक अद्भुत भवनों का निर्माण किया।

राजसूय यज्ञ

देवर्षि नारद के कहने से महाराज युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ करने का निश्चय किया। यज्ञ की तैयारी के लिए श्रीकृष्ण भी इन्द्रप्रस्थ आ गए। दिग्विजय की बात चली तो श्रीकृष्ण बोले, "और तो सब राजे जीते जा सकते हैं, पर सम्राट् जरासन्ध को जीतना कुछ कठिन है। शिशुपाल उसके सेनापति हैं और जरासन्ध ने कितने ही राजाओं को कैद में डाल रखा है। जरासन्ध का राज्य मगध जीता जाय तो सब काम सिद्ध! अन्त में निश्चय हुआ कि श्रीकृष्ण, भीमसेन और अर्जुन तीनों जरासन्ध को जीतने के लिए मगध पहुँचें।

जरासन्ध-वध

कृष्ण, भीम और अर्जुन ब्राह्मण के वेश में जरासन्ध के पास पहुँचे। जरासन्ध ने इन तीनों का स्वागत किया। भीम और अर्जुन के लिए श्रीकृष्ण ने कह दिया कि इन दोनों ने मौनव्रत रखा है; आधी रात से पहले बात नहीं करेंगे। राजा ने उन्हें अतिथि-भवन में ठहराया और आधी रात को उनके पास गया। उसने झट पहचान लिया कि ये ब्राह्मण-वेशधारी क्षत्रिय हैं। श्रीकृष्ण ने भी साफ-साफ कह दिया कि हम तुम्हारे शत्रु हैं और तुम्हें दण्ड देने आए हैं। तुमने राजाओं पर बहुत अत्याचार किए हैं। फिर श्रीकृष्ण ने अपना तीनों का परिचय दिया। उन्होंने जरासन्ध से कहा कि या तो सारे कैद राजाओं को छोड़ दो या फिर हमारे साथ युद्ध करो।

यह निश्चय हुआ कि जरासन्ध और भीमसेन का मल्लयुद्ध होगा और उसी से हार-जीत का फैसला होगा। जरासन्ध और भीमसेन में बड़ी देर तक मल्ल-युद्ध होता रहा। दोनों अपने-अपने दाँव-पेच दिखाकर एक-दूसरे को पछाड़ने का प्रयत्न करते रहे। दोनों का यह युद्ध बिना खाए-पिए और विश्राम किए तेरह दिन तक चलता रहा। चौदहवें दिन जरासन्ध ढीला पड़

गया। ठीक अवसर देखकर श्रीकृष्ण ने भीमसेन का उत्साह बढ़ाया और भीमसेन ने जरासन्ध को ऊपर उठाकर घुमाना प्रारम्भ किया। उधर श्रीकृष्ण ने भीम को दिखाते हुए एक सरकण्डा लेकर उसे दातुन की तरह बीच से चीर दिया और दोनों टुकड़ों को दूर-दूर फेंक दिया। भीमसेन इस संकेत को समझ गया और उसने जरासन्ध को पटककर, अपने एक हाथ से उसका पैर पकड़कर और दूसरे पैर पर अपना पैर रखकर दो हिस्सों में चीर डाला। फिर जरासंध के शरीर के दोनों टुकड़ों को दूर-दूर फेंक दिया। तब श्रीकृष्ण ने जरासन्ध के रथ को जोत लिया और तीनों जने उसपर बैठकर उस जगह पहुँचे जहां जरासन्ध ने राजाओं को कैद कर रखा था। उन्होंने सारे राजाओं को कैद से मुक्त कर दिया। राजाओं ने श्रीकृष्ण और पाण्डवों के प्रति कृतज्ञता प्रकट की तो श्रीकृष्ण ने उन्हें बताया कि महाराज युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ करना चाहते हैं, इस कार्य में आप सब उनकी सहायता करें। राजाओं ने सहायता करना स्वीकार कर लिया। फिर जरासन्ध का पुत्र सहदेव श्रीकृष्ण के पास भेंट लेकर उपस्थित हुआ और पिता के अपराध के लिए क्षमा-याचना की।

राजा युधिष्ठिर का यज्ञ विधिपूर्वक सम्पन्न हुआ।

दुर्योधन का विचार था पाण्डवों से युद्ध ठानकर, जीत लिया जाय, पर उसके मामा शकुनि ने इस कार्य को असम्भव बताया। वह छल-कपट से ही पाण्डवों का विनाश करने के पक्ष में था।

उसने दुर्योधन के साथ सलाह करके पाण्डवों के साथ जुआ खेलने का कार्यक्रम बनाया। बात यह थी कि राजा युधिष्ठिर को जुआ खेलने की बुरी लत थी और शकुनि छल के साथ जुआ खेलने में माना हुआ था। उसे पूरा विश्वास था कि इस खेल में वह राजा युधिष्ठिर को अवश्य हरा देगा।

युधिष्ठिर को जुआ खेलने को बुलावा गया और वे जुआ खेलने आ भी पहुँचे। जुआ शुरू हुआ। युधिष्ठिर हारते-हारते सारा राज्य हार गया। अन्त में अपने को दाँव पर लगा दिया और उसके बाद द्रौपदी को। युधिष्ठिर ने जुए में सब-कुछ हार दिया। दुःशासन अन्तःपुर में जाकर द्रौपदी को घसीटता हुआ सभा में लाया और उसे अपमानित किया। द्रौपदी को यों भरी सभा में अपमानित होते देखकर भीमसेन का क्रोध भड़क उठा। उसने इस सारे घोर अपमान का कारण युधिष्ठिर द्वारा जुआ खेलना ही माना। भीम ने सहदेव को आग लाने के लिए कहा ताकि युधिष्ठिर ने जिस बाँह से जुआ खेला है, उस बाँह को ही जला दिया

जाय। पांचों पाण्डवों के सामने दुःशासन द्रौपदी को अपमानित करता रहा और वे खून के घूंट पीते मुंह लटकाये बैठे रहे। अन्त में दुर्योधन ने अपनी जांघ दिखाते हुए द्रौपदी को कहा कि यहां आकर बैठो। इस नीचतापूर्ण बात को सुनकर भीमसेन बोला, "ए पापी दुर्योधन! मैं तेरी इस जांघ को युद्ध में न तोड़ डालूं तो मेरा नाम भीमसेन नहीं।"

अन्त में धृतराष्ट्र ने बीच-बचाव करके पाण्डवों को जुए की हार से मुक्त कर दिया और हारा हुआ राज्य भी लौटा दिया। पाण्डव इन्द्रप्रस्थ को लौट गए और फिर से राज-काज देखने लगे।

दुष्ट दुर्योधन, दुःशासन और शकुनि को लगा कि हम तो जीतकर भी हार गए। उन्होंने फिर जुआ खेलने का कार्यक्रम बनाया। अबकी बार शर्त यह रखी कि जो हार जाएँ वे बारह वर्ष तक वन में रहें। तेरहवें वर्ष अज्ञातवास में रहें। यदि अज्ञातवास में पहचान लिये जाएँ तो पुनः बारह वर्ष वनवास। युधिष्ठिर फिर कौरवों के जाल में फँस गया और जुए में हार गया। इस बार द्रौपदी-सहित पाण्डव वनवास के लिए जंगल-जंगल भटकने लगे।

घूमते-घूमते वे बदरिकाश्रम में जा पहुँचे।

भीमसेन और हनुमान

बदरिकाश्रम में एक दिन वायु में उड़ता हुआ एक सहस्रदल कमल द्रौपदी के पास आ गिरा। द्रौपदी ने उस अत्यन्त सुन्दर और सुगन्धयुक्त कमल को देखा। वह कमल उसे इतना मन भाया कि वैसे ही और कमल लाने के लिए उसने भीमसेन से अनुरोध किया। भीमसेन कमल लाने निकल पड़ा। गन्धमादन पर्वत के एक शिखर पर भीमसेन को कदली वन दिखाई दिया। वह कदली वन में जा पहुँचा तो उसे जल-पक्षी उड़ते दिखाई दिए। यह सोचकर कि पास ही कोई सरोवर है और उसमें उस कमल जैसे कमल अवश्य होंगे, भीमसेन सरोवर को खोजने चला। कुछ ही दूर भीम ने कमलों से भरा एक सरोवर देखा। भीमसेन ने इस सरोवर में स्नान किया। जब वह और भी ऊँचाई की ओर चला तो क्या देखता है कि संकरे मार्ग को रोक-कर एक बन्दर लेटा पड़ा है। भीमसेन ने बन्दर से कहा, "मार्ग छोड़कर एक ओर हो जाओ!"

बन्दर बोला, "अरे भई, क्यों शोर मचाते हो? मैं बीमार हूँ, मुझे तंग मत करो। और तुम इस ओर कहाँ जा रहे हो? आगे का मार्ग तो ठीक नहीं है। चुपचाप पीछे लौट जाओ!"

भीमसेन ने कहा, "तुम मेरी चिन्ता छोड़ो और एक तरफ हटो, मुझे तुम्हारी नेक सलाह की जरूरत नहीं है। यह सोने की जगह नहीं, रास्ता है।"

बन्दर ने कहा, "भैया रे ! मैं रोग का मारा यहाँ पड़ा हूँ। मुझसे उठा नहीं जाता। तुम मेरे ऊपर से निकल जाओ या फिर मेरी पूँछ को एक ओर हटाकर निकल जाओ।"

भीमसेन पूँछ को बाएँ हाथ से पकड़कर उठाने लगा, पर वह तो हिली तक नहीं। तब भीमसेन ने दोनों हाथों से पूरा जोर लगाकर पूँछ को उठाने का प्रयत्न किया, पर वह फिर भी नहीं हिली। अब अपने दस हजार हाथियों जितने बल का घमण्ड करनेवाला भीमसेन मारे लज्जा के धरती में गड़-सा गया। भीम भलीभाँति समझ गया कि यह कोई साधारण बन्दर नहीं है। जब भीमसेन ने उस वानर से परिचय पूछा तो उसने बताया कि मैं पवनपुत्र हनुमान हूँ। फिर हनुमान ने भीमसेन को भरोसा दिलाया कि तुम्हारे कौरवों के साथ होनेवाले युद्ध में मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। फिर हनुमान जी ने भीमसेन को जाने का मार्ग दिया और स्वयं अन्तर्धान हो गए।

यहाँ से चलकर भीमसेन सौगन्धिक वन में पहुँचा। वहाँ उसकी भेंट पहरा देनेवाले राक्षसों से हो गई।

उन्होंने भीमसेन से इस वन में आने का कारण पूछा। भीमसेन ने जब अपने आने का उद्देश्य बताया तो पहरेवालों ने कहा कि भीतर प्रवेश करने के लिए कुबेर से अनुमति लेना आवश्यक है। पर भीमसेन ने अनुमति लेने की कोई आवश्यकता नहीं समझी और सरोवर में फूल तोड़ने जा घुसा। पहरेदार राक्षस जब उसे मारने-पकड़ने दौड़े तो भीमसेन ने सबको मार भगाया और कमल लेकर वापस लौटने लगा। उधर द्रौपदी और युधिष्ठिर भी उसे खोजते हुए वहाँ आ पहुँचे। भीमसेन उन्हें मिल गया। अपने मन-पसन्द कमलों को पाकर द्रौपदी बड़ी प्रसन्न हुई।

यहाँ से चलकर वे विशाल बदरी के नाम से प्रसिद्ध नर-नारायण आश्रम को लौट गए। यहाँ उनके आश्रम के पास ही एक ब्राह्मण-वेशधारी राक्षस भी रहने लगा। इसका नाम जटासुर था। एक दिन भीमसेन की अनुपस्थिति में उसने युधिष्ठिर, द्रौपदी, नकुल और सहदेव सबका हरण कर लिया। पता लगने पर भीमसेन ने उसका पीछा किया और युद्ध के लिए ललकारा। दोनों में भयंकर युद्ध ठन गया। अन्त में भीमसेन ने अपनी गदा की चोट से उस राक्षस का कचूमर निकाल डाला।

घूमते-फिरते पाण्डव कैलास पर्वत पर आ पहुँचे।

एक दिन भीमसेन यक्षराज कुबेर की राजधानी देखने चला गया। वहाँ भीमसेन की मुठभेड़ राजधानी के रक्षक यक्षों से हो गई। भीमसेन ने वहाँ मणिमान् नामक यक्ष को मार डाला। यक्षों ने इसकी सूचना राजा कुबेर को दी। कुबेर सूचना पाकर जिस समय घटना-स्थल पर पहुँचे, उसी समय भीमसेन को खोजते युधिष्ठिर भी वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने यक्षराज कुबेर को प्रणाम किया। पाण्डवों का परिचय पाकर धनपति कुबेर का क्रोध जाता रहा।

इन्हीं दिनों अर्जुन भी घोर तपस्या द्वारा दिव्यास्त्रों को प्राप्त करके लौट आया।

पाण्डवों के वनवास के दस वर्ष पूरे हो चुके थे। वे गन्धमादन पर्वत से उतरकर घूमते-फिरते सरस्वती के तीर पर फैले द्वैत वन में लौट आए। यहाँ पहुँचते-पहुँचते उनके वनवास का बारहवाँ वर्ष प्रारम्भ हो गया।

भीमसेन और अजगर

एक दिन वन में अकेले घूमते भीमसेन को एक अजगर ने जकड़ लिया। महाबली भीमसेन ने उससे

छूटने का बहुत प्रयत्न किया, पर असफल रहा। तब भीमसेन ने अजगर से उसका परिचय पूछा। अजगर ने बताया, "मैं पूर्वजन्म में तुम्हारा पूर्वज राजर्षि नहुष था। मैंने ब्राह्मणों का अनादर किया था और महर्षि अगस्त्य के शाप से अजगर बना हूँ। मैं भूखा हूँ और तुम्हें अपना भोजन बनाऊँगा। हाँ, यदि तुम मेरे प्रश्नों के उत्तर दे सको तो मैं तुम्हें छोड़ सकता हूँ।"

बड़ी देर तक वन से भीमसेन के न लौटने से चिंतित युधिष्ठिर उन्हें खोजने निकले हुए थे। उन्होंने अजगर द्वारा जकड़े भीमसेन को देखा और भीमसेन के कहने से उन्होंने अजगर के प्रश्नों के उत्तर देना स्वीकार किया। अजगर के प्रश्नों के उत्तर में युधिष्ठिर ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि ब्राह्मण और शूद्र आदि जातियाँ कर्म पर आधारित हैं, जन्म पर नहीं। इससे वह अजगर सन्तुष्ट हुआ और उसने भीमसेन को छोड़ दिया। वह स्वयं भी महर्षि के शाप से मुक्त हो गया और स्वर्ग चला गया।

पाण्डव वन-वन भटकते अत्यन्त कष्ट पा रहे हैं, यह समाचार मिलने पर दुर्योधन, कर्ण और शकुनि ने योजना बनाई कि वन में जाकर अपनी आँखों से पाण्डवों की दुर्दशा देखनी चाहिए। धृतराष्ट्र से स्वीकृति लेने के लिए उन्होंने बहाना ढूँढ निकाला कि वहाँ राज्य

का जो गोधन है, उसकी गिनती और निरीक्षण के लिए वहाँ जाना आवश्यक है। द्वैत वन में कौरवों की गन्धर्वों के साथ लड़ाई हो गई। इस युद्ध में गन्धर्वों ने दुर्योधन को कैद कर लिया। शकुनि, दुःशासन और कर्ण भाग निकले। युधिष्ठिर को पता लगा तो उन्होंने भीम और अर्जुन को भेजकर दुर्योधन को गन्धर्वों से छुड़ाया।

यहाँ से पाण्डव काम्यक वन में चले गए।

द्रौपदी-हरण

काम्यक वन में पाण्डव अपने वनवास के दिन तैसे-कैसे काट रहे थे। एक दिन ब्राह्मणों के कहने से वे पाँचों जंगल के हिंसक जीवों को मारने के लिए चले गए। ये हिंसक जीव ब्राह्मणों पर प्रायः आक्रमण कर देते थे। द्रौपदी आश्रम में अकेली ही रह गई। पाण्डवों की अनुपस्थिति में सिन्धु देश का प्रतापी राजा जयद्रथ शाल्व देश की ओर जा रहा था। काम्यक वन के मार्ग से निकलते हुए उसने आश्रम के द्वार पर खड़ी द्रौपदी को देखा। द्रौपदी के रूप-यौवन को देखकर जयद्रथ

ठगा-सा रह गया। उसने अपने साथी राजा कोटिकाश्य को इस स्त्री का परिचय प्राप्त करने के लिए भेजा। कोटिकाश्य ने द्रौपदी का परिचय प्राप्त करके जयद्रथ को बता दिया। राजा जयद्रथ द्रौपदी के पास जाकर कहने लगा, "तुम इन राज्यभ्रष्ट पाण्डवों को छोड़कर मेरी रानी बन जाओ और राजसुख का उपभोग करो।"

यह सुनकर द्रौपदी ने उसे खूब फटकारा। द्रौपदी ने भाँप लिया कि वह दुष्ट अपनी नीचता का प्रदर्शन अवश्य करेगा। इसलिए उसने लम्बी बहस में उसे उलझाए रखा। द्रौपदी को पता था कि यह दुष्ट मुझे अकेली जानकर ही ऊटपटाँग बातें कर रहा है। पाण्डवों के लौटने का समय होनेवाला था। इसीलिए द्रौपदी ने उसे बहस में उलझाए रखा कि पाण्डव आ जाएँ तो इस पापी को उचित दण्ड दें। पर जयद्रथ ने द्रौपदी को बलपूर्वक हर ले-जाने की कुचेष्टा की। द्रौपदी ने पास ही अवस्थित पुरोहित धौम्य को पुकारा और जयद्रथ को धक्का मारकर गिरा दिया। धौम्य जी ने भी जयद्रथ को रोका, पर वह नहीं माना और द्रौपदी को बलपूर्वक ले गया। पुरोहित धौम्य उनका पीछा करते चले।

जब पाण्डव लौटकर आश्रम में आए तो वहाँ द्रौपदी नहीं थी। द्रौपदी की दासी धात्रेयी बैठी रो रही

थी। उसने सारी बात पाण्डवों को बता दी। पाण्डव तुरन्त जयद्रथ का पीछा करने निकल पड़े। उन्होंने जयद्रथ को ललकारा और दोनों पक्षों में युद्ध आरम्भ हो गया। महापराक्रमी पाण्डवों ने जयद्रथ की सेना को मार भगाया और द्रौपदी को छुड़ा लिया, किन्तु अवसर पाकर जयद्रथ भाग खड़ा हुआ। युधिष्ठिर तो द्रौपदी को लेकर नकुल-सहदेव के साथ आश्रम को लौट आए, किन्तु भीम और अर्जुन जयद्रथ का पीछा करने लगे। अन्त में भीमसेन ने जयद्रथ को पकड़ ही लिया और थप्पड़ों तथा लातों-घूंसों से उसकी खूब पिटाई की। अर्जुन को लगा कि भैया भीम के वज्र जैसे मुक्कों से जयद्रथ दम तोड़ देगा। इसलिए उसने भीमसेन से कहा, "भैया! इसे जान से मत मारना। यह दुःशला का पति है। वह बेचारी विधवा हो जाएगी। दुःशला तो एक तरह से हमारी बहन ही है।"

भीमसेन ने जयद्रथ से कहा, "यदि तू अपने को सार्वजनिक रूप में युधिष्ठिर का दास घोषित करने का वचन दे तो मैं तुझे छोड़ सकता हूँ।"

मरता क्या न करता! जयद्रथ ने शर्त मान ली तो भीमसेन ने भी पिटाई बन्द कर दी और उसे अपने साथ आश्रम को ले चला। अन्त में युधिष्ठिर के कहने से जयद्रथ को सिर मूंडकर छोड़ दिया गया और 'दास'

वाली शर्त भी खत्म कर दी।

पाण्डवों के वनवास के बारह वर्ष पूरे होने ही वाले थे। अब अज्ञातवास का एक वर्ष शेष था। इस अज्ञातवास में पाण्डव किसी की पहचान में नहीं आने चाहिए थे। नहीं तो फिर बारह वर्ष का वनवास और एक वर्ष का अज्ञातवास भोगना पड़ता। दुर्योधन ने यह शर्त जान-बूझकर इसीलिए रखी थी कि अज्ञातवास के दिनों में हम अपने जासूस छोड़कर पाण्डवों को पहचान लेंगे और शर्त हार जाने पर उन्हें दोबारा वनवास को भेज देंगे और यही क्रम लगातार जारी रहेगा, जिससे पाण्डव वनवास का कष्ट भोगते-भोगते ही मर-खप जाएँगे।

पाण्डवों ने अज्ञातवास का एक वर्ष विराट्नगर में रहकर बिताने का निश्चय किया। वहाँ सभी को अपना नाम और वेश बदलकर रहना था। युधिष्ठिर ने कहा, "मैं कंक नामक ब्राह्मण बनकर राजा विराट् को अपने पाँसे के खेल से प्रसन्न करूँगा और उनका दरबारी बनकर रहूँगा।"

भीमसेन ने कहा, "मैं बल्लव नाम से राजा का रसोइया बनकर कार्य करूँगा। मैं कहूँगा कि मैं महाराज युधिष्ठिर के पास यही काम करता था।"

अर्जुन ने कहा, "मैं अपने को हीजड़ा बताकर वहाँ

रहूँगा और बृहन्नला अपना नाम बताऊँगा। मैं गाने, बजाने और नाचने की शिक्षा महलों की स्त्रियों को दूँगा।"

नकुल ने कहा, "मैं घोड़ों को काबू करने और सिधाने के कार्य पर नौकर हो जाऊँगा। मैं अपना नाम ग्रंथिक रखूँगा। मैं घोड़ों को तरह-तरह की चालें सिखाने के साथ उनका इलाज भी किया करूँगा। मैं कहूँगा कि यही काम महाराज युधिष्ठिर के पास भी करता था।"

सहदेव ने कहा, "मैं विराट् के यहाँ गौशाला का अध्यक्ष बनकर रहूँगा। मेरा नाम तन्तिपाल होगा।"

द्रौपदी ने कहा, "मैं सैरन्ध्री नाम से राजा विराट् के अन्तःपुर में रहूँगी और रानियों के बाल सँवारने, वेणी गूंथने का काम किया करूँगी। मैं कहूँगी कि मैं रानी द्रौपदी की परिचारिका थी।"

पाण्डव विराटनगर के बाहर श्मशान भूमि में जा पहुँचे। अब यदि वे अपने शस्त्रास्त्रों को लिये हुए ही नगर में प्रवेश करते तो पहचान लिये जाने का डर था। इसलिए श्मशान के पास के एक टीले पर उगे शमी वृक्ष के खोखल में सबने अपने शस्त्रास्त्र छिपाकर रख दिए। इसके बाद श्मशान से एक लाश उठा लाए और उस वृक्ष की शाखा के साथ लटका दी, जिससे

लाश की सड़ाँद के कारण कोई भी उस ओर न आए।

युधिष्ठिर ने पाँचों भाइयों के गुप्त नाम भी रखे जिससे समय पड़ने पर उन नामों का प्रयोग किया जा सके।

अब सबने अपना-अपना वेश बदला और बारी-बारी राजा विराट् के दरबार में उपस्थित होने लगे। राजा विराट् ने सबको अपने यहाँ उनके बताए कामों पर नौकर रख लिया।

राजा विराट् के यहाँ छद्मवेश में रहते पाण्डवों को जब तीन महीने हो गए, तब विराट् नगर में एक त्यौहार का दिन आया। उस त्यौहार के दिन नामी पहलवानों की कुश्तियाँ होती थीं। कुश्ती लड़नेवाले पहलवानों में एक जीमूत नाम का दैत्य-जैसा विशाल-काय और बलशाली पहलवान था। उसके साथ कुश्ती लड़ने के लिए कोई भी पहलवान तैयार नहीं हुआ। अन्त में राजा ने अपने रसोइये बल्लव (भीमसेन) को उसके साथ कुश्ती लड़ने को कहा। बल्लव ज्यों ही लंगोट कसकर अखाड़े में उतरा, दर्शक तालियाँ बजाने लगे। दोनों में कुश्ती प्रारम्भ हुई। दर्शक दोनों पहल-वानों का उत्साह बढ़ाने लगे, किन्तु थोड़ी ही देर में भीमसेन ने जीमूत को ऊपर उठा लिया और चक्कर-घिन्नी देकर धरती पर दे मारा। लोगों को यह देखकर

बड़ा आश्चर्य हुआ कि एक नामी पहलवान को एक रसोइये ने पकड़कर मार डाला। राजा ने बल्लव को खूब पुरस्कार दिया। बाद में जब बल्लव से लड़ने के लिए कोई पहलवान न रह गया तो राजा विराट् सिंहों और हाथियों से उसकी कुश्ती करवाता और बल्लव उन्हें भी पछाड़कर भगा देता।

कीचक-वध

पाण्डवों को विराट्नगर में रहते दस मास बीत चले। एक दिन राजा विराट् के सेनापति और सम्बन्ध में साले, कीचक की दृष्टि द्रौपदी पर पड़ी। वह द्रौपदी के अद्भुत रूप-सौन्दर्य को देखकर मुग्ध हो गया। उसने इस दासी को अपनी पत्नी बनाने का निश्चय किया। उसने अपनी इच्छा अपनी बहन, रानी सुदेष्णा को बताई। रानी सुदेष्णा ने कहा कि तुम स्वयं सैरन्ध्री से बात कर लो। तब कीचक ने अपने मन की बात द्रौपदी को बताई।

द्रौपदी ने कहा, "मैं किसी की विवाहिता हूँ। आपका मुझसे इस तरह बात करना भी धर्म-विरुद्ध है।"

पर कीचक पर इन बातों का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। वह द्रौपदी को तरह-तरह के प्रलोभन देने लगा। तब द्रौपदी ने उसे स्पष्ट कह सुनाया कि यदि मेरी ओर पापपूर्ण दृष्टि से देखोगे तो जो पाँच गन्धर्व मेरे पति हैं और सदा मेरी रक्षा करते हैं, वे तुम्हें मार डालेंगे।

निराश होकर कीचक फिर अपनी बहन रानी सुदेष्णा के पास गया और सैरन्ध्री को किसी तरह राजी करवाने की बात की। सुदेष्णा ने उसे बहुत समझाया, पर वह अपनी ज़िद पर अड़ा रहा। अन्त में रानी सुदेष्णा ने कहा, "मैं उसे किसी काम के बहाने तुम्हारे ही महल में भेजूँगी, तब तुम उससे फिर बात करना।"

एक दिन कीचक के महल में भोज का आयोजन हुआ। रानी ने वहाँ से भोजन लाने के लिए सैरन्ध्री को भेजा। सैरन्ध्री ने वहाँ जाने से आनाकानी की, पर रानी के यह आश्वासन देने पर कि वह तुम्हारे साथ किसी तरह का अभद्र व्यवहार नहीं करेगा, सैरन्ध्री वहाँ चली गई। कीचक ने जब सैरन्ध्री को देखा तो उसे अपनी योजना सफल होती मालूम पड़ी। वह पहले तो सैरन्ध्री से इधर-उधर की बातें करता रहा, पर जब बातों के मनचाहे उत्तर नहीं मिले तो

ऊटपटाँग बातें करने लगा।

जब सैरन्ध्री उठकर चली तो वह रास्ता रोककर खड़ा हो गया। इसपर सैरन्ध्री ने उसे जोर का धक्का देकर गिरा दिया और स्वयं भाग खड़ी हुई। वह यहाँ से सीधी राजसभा में जा पहुँची। कीचक भी उसका पीछा करता हुआ राजसभा में जा पहुँचा। कीचक ने सैरन्ध्री को केशों से पकड़ लिया और लात मारी। सैरन्ध्री लात खाकर गिर पड़ी और उसके मुँह से खून बहने लगा। सारे सभासद् एक स्त्री के साथ ऐसा दुर्व्यवहार करने के लिए कीचक की निन्दा करने लगे। युधिष्ठिर और भीमसेन यह सब-कुछ देख रहे थे। भीमसेन कीचक को मारने के लिए उठने लगा तो युधिष्ठिर ने संकेत करके उसे रोक दिया। होश सँभालने पर सैरन्ध्री ने राजा से अपनी सुरक्षा के लिए कहा। पर अपने सेनापति और साले को दण्ड देने की हिम्मत राजा को नहीं पड़ी। तब सैरन्ध्री ने सारी राजसभा को फटकार सुनाई, क्योंकि सबके देखते-देखते उसका अपमान हुआ था और किसी ने भी कीचक को रोकने का साहस नहीं किया।

सैरन्ध्री रानी सुदेष्णा के महल में चली गई। उसने अपनी व्यथा-कथा सुदेष्णा को सुनाई। द्रौपदी ने रानी सुदेष्णा को भी फटकारा कि तुमने जान-बूझकर

मुझे वहाँ भेजा था। जब रानी सुदेष्णा से भी उसे अपनी सुरक्षा का कोई स्पष्ट आश्वासन नहीं मिला तो अपमान की आग से जलती द्रौपदी ने रात को भीमसेन से जाकर कहा कि किसी तरह इस पापी कीचक को ठिकाने लगाओ। भीमसेन ने द्रौपदी को कहा, "तुम्हें कुदृष्टि से देखनेवाला पापी कीचक शीघ्र ही यमलोक को जायगा।"

द्रौपदी वापस आ गई।

दूसरे दिन कीचक फिर सैरन्ध्री के पास आया और बोला, "तुमने राजा के पास मेरी शिकायत करके क्या कर लिया? राजा तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता। यहाँ का वास्तविक राजा तो मैं हूँ। इसलिए मेरी बात मानकर मेरी रानी बन जाओ!"

सैरंध्री ने कहा, "ठीक है। तुम कल रात को नृत्यशाला में आना। वहाँ मैं तुम्हें अपना फैसला बता दूँगी।"

द्रौपदी ने भीमसेन के पास जाकर बता दिया कि रात को दुष्ट कीचक नृत्यशाला में मुझसे बात करने आएगा। भीमसेन पहले ही नृत्यशाला में छिपकर बैठ गया। ज्योंही कीचक वहाँ पहुँचा, भीमसेन ने ललकारा और दोनों में लड़ाई होने लगी। कीचक भी उस समय के गिने-चुने बलशाली लोगों में माना जाता था। उसने

भीमसेन के साथ खूब मुकाबला किया, किन्तु अन्त में मारा गया।

कीचक की मृत्यु की खबर फैलते ही और यह पता लगने पर कि सैरंध्री के कारण उसके गंधर्व पतियों द्वारा यह मृत्यु हुई है, कीचक के बन्धु-बांधवों ने सैरन्ध्री को पकड़ लिया और कीचक के साथ ही चिता में जीवित जला देने का निश्चय किया।

इस अवसर पर महाबली भीमसेन ने गन्धर्वों-जैसा वेश बनाया और सैरंध्री को कीचक के सम्बन्धियों से छुड़ाकर रानी सुदेष्णा के महल में पहुँचा दिया।

कीचक के मारे जाने से राजा के मन में भय बैठ गया। उसने रानी सुदेष्णा के द्वारा सैरंध्री को कहलाया कि देवि! तुम यहाँ से चली जाओ। राजा को डर था कि उस स्त्री के कारण कोई और संकट न पैदा हो जाय। सैरंध्री ने दो सप्ताह वहाँ और रहने की अनुमति राजा से ले ली।

गो-हरण

दुर्योधन ने अज्ञातवास की अवधि में पाण्डवों की खोज निकालने के लिए सभी जगह अपने जासूस भेज

रखे थे। वे सब असफल होकर लौट आए। पाण्डवों का कहीं पता नहीं चला। इससे दुर्योधन को बड़ी चिन्ता हुई। अज्ञातवास के कुछ ही दिन बाकी थे। कीचक के मारे जाने का समाचार सुनकर दुर्योधन ने अनुमान लगाया कि उस वीर को भीमसेन के सिवा दूसरा कोई नहीं मार सकता। उसे इस बात में भी संदेह न रहा कि सैरन्ध्री के छद्मवेश में द्रौपदी ही वहाँ रह रही है। उसने योजना बनाई कि राजा विराट् के गो-धन का हरण किया जाय। पाण्डव वहाँ होंगे तो राजा विराट् की सहायता के लिए युद्ध करेंगे और उसी समय पहचान लिये जाएँगे।

त्रिगर्त का राजा सुशर्मा भी अपनी सेना-सहित दुर्योधन और कर्ण के साथ विराट् पर आक्रमण करने चला। त्रिगर्तराज सुशर्मा ने विराट् की गौओं पर अधिकार कर लिया।

गो-रक्षक से गो-हरण की सूचना मिलने पर राजा विराट् और राजा त्रिगर्त की सेना में भयंकर युद्ध छिड़ गया। त्रिगर्त देश की सेना ने विराट् की सेना को हरा दिया और राजा विराट् को बन्दी बनाकर ले चली। इस संकट की घड़ी में युधिष्ठिर ने भीमसेन को कहा कि जाओ और राजा विराट् को शत्रुओं के चंगुल से छुड़ाकर लाओ!

भीमसेन ने राजा सुशर्मा को हराकर राजा विराट् को छुड़ा लिया और सुशर्मा को भी कैद कर लिया। अन्त में युधिष्ठिर के कहने से भीम ने सुशर्मा को छोड़ दिया। राजा विराट् ने बल्लव के प्रति बड़ी कृतज्ञता प्रकट की।

दूसरी ओर से कौरव-सेना ने भी विराट्नगर पर आक्रमण कर दिया तो अर्जुन ने उन्हें खदेड़ा। अर्जुन ने राजकुमार उत्तर को अपना वास्तविक परिचय दे दिया था। उसने अपने पिता को बताया कि ये पाण्डव हैं। फिर राजा विराट् ने अपनी पुत्री उत्तरा का विवाह अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु के साथ कर दिया।

तेरह वर्ष पूरे हो चुके थे। अब दुर्योधन वनवास-पूर्व का पाण्डवों का राज्य उन्हें लौटा दे, इसके लिए यह निश्चय हुआ कि श्रीकृष्ण दूत बनकर कौरवों के पास जाएँ। वे गए भी, पर दुर्योधन ने तो सूई की नोक जितनी भूमि भी बिना युद्ध के देना स्वीकार नहीं किया। तब दोनों ओर से युद्ध की तैयारी होने लगी।

महाभारत का युद्ध

दोनों पक्षों की शस्त्रास्त्रों से सज्जित सेनाएँ कुरुक्षेत्र के मैदान में आमने-सामने डट गईं। कौरव-

पक्ष के सेनापति भीष्म पितामह थे और पाण्डवों के धृष्टद्युम्न। कौरवों के पास ग्यारह अक्षौहिणी सेना थी और पाण्डवों के पास सात। श्रीकृष्ण पाण्डवों की ओर थे और युद्ध में अर्जुन के सारथि बने हुए थे। वैसे वे पाण्डवों के परामर्शदाता थे। राजनीति और युद्ध-नीति का उस समय श्रीकृष्ण-जैसा पंडित दूसरा कोई नहीं था।

युद्ध के पहले ही दिन इनकी दुर्योधन से भिड़न्त हो गई। महाभारत-युद्ध में भीमसेन ने अनेक धृतराष्ट्र-पुत्रों और उनके समर्थकों का वध किया। गजसेना का संहार करके तो भीमसेन ने लहू की नदी ही बहा दी थी। भीमसेन ने कई बार दुर्योधन, कृतवर्मा, द्रोणाचार्य, दुःशासन, कर्ण, शल्य आदि के साथ घोर युद्ध किया और उनके दांत खट्टे किए। दुर्योधन और कर्ण तो कई बार भीमसेन से हार खाकर युद्ध से भागे। द्रोणाचार्य को भीमसेन ने रथसहित अनेक बार दूर उठा फेंका था। गदा-युद्ध में भीमसेन के सामने टिक सके, ऐसा कोई वीर था ही नहीं। भीमसेन के एक ही घूंसे से बड़े-बड़े वीर इस दुनिया से कूच कर जाते थे। इनका एक ही थप्पड़ शत्रुओं को मौत के मुंह में पहुँचा देता था। कभी ऐसा होता कि भीमसेन को भी हार माननी पड़ती। आचार्य द्रोण और कर्ण से ही भीमसेन

ने दो-तीन बार हार खाई थी।

जब आचार्य द्रोण का धृष्टद्युम्न द्वारा वध कर दिया गया, तब पता लगने पर उनका एकमात्र पुत्र अश्वत्थामा शोक और क्रोध में भरा हुआ पाण्डव-सेना का संहार करने लगा। उसने 'नारायण' नामक अस्त्र का प्रयोग किया। नारायण अस्त्र द्वारा हजारों चमकते तीखे मुँह वाले बाण, लोहे के जलते गोले, चक्र और विविध प्रकार के शस्त्रास्त्र प्रकट हुए और पाण्डव-सेना पर बरसने लगे। जंगल की आग की तरह वह अस्त्र पाण्डव-सेना का नाश करने लगा। अपनी सेना को यों नष्ट होता देखकर युधिष्ठिर को बड़ी चिन्ता हुई। पाण्डव-सेना में भगदड़ मच गई।

श्रीकृष्ण ने परिस्थिति को देखकर तुरन्त अपनी सेना में घोषणा करवा दी कि सभी योद्धा अपने-अपने अस्त्रास्त्र धरती पर रख दें और रथों, हाथियों तथा घोड़ों से उतर जाएँ। ऐसा करने पर नारायण अस्त्र का प्रभाव नहीं पड़ेगा।

श्रीकृष्ण की हथियार डालने की बात भीमसेन को बुरी लगी। उसने इसे वीरों के लिए अपमानजनक समझा। उसने अर्जुन को भी हथियार डालने से रोका, पर अर्जुन ने नारायणास्त्र के आगे शस्त्र रख देना ही उचित समझा। तब अकेला भीमसेन हथियार डाले

बिना अश्वत्थामा का सामना करने चला। भीमसेन के सामना करने से नारायणास्त्र का प्रभाव और भी बढ़ गया। भीमसेन के माथे पर जोर का प्रहार हुआ। जब श्रीकृष्ण को भीमसेन पर आई विपत्ति का पता लगा तो उन्होंने बलपूर्वक भीमसेन को रथ से उतारा और उसके शस्त्रास्त्र भी रखवा दिए। तब नारायणास्त्र अपने-आप शान्त हो गया।

रुधिर-पान

महाभारत का युद्ध प्रारम्भ हुए सत्रह दिन हो गए थे। भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य जैसे महारथी स्वर्ग सिधार चुके थे। अर्जुन के हाथों जयद्रथ मारा जा चुका था।

पाण्डव-पक्ष में अर्जुन-पुत्र वीर अभिमन्यु, भीम-पुत्र घटोत्कच मारे जा चुके थे। दोनों ओर की अठारह अक्षौहिणी सेना में से थोड़ी-सी सेना ही बाकी बची थी। धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से भी अधिकांश मारे जा चुके थे।

कौरवों का सेनापति आज कर्ण था। कर्ण अर्जुन

को अपना परम शत्रु मानता था और आज दिन के आरम्भ में ही अर्जुन से दो-दो हाथ करने के विचार से उसी ओर चला जा रहा था।

भीमसेन भी अपनी टक्कर के किसी कौरव वीर को खोजता अपना रथ बढ़ा रहा था कि उसे दुःशासन सामने दिखाई पड़ गया। उन दोनों के मन में एक-दूसरे के प्रति पुराना वैर भरा हुआ था। दोनों जीने-मरने की चिन्ता छोड़कर लड़ने लगे। भीमसेन के मन में पुरानी बातें—द्रौपदी को केशों से खींचकर भरी सभा में लाना और उसकी साड़ी खींचना—याद आईं तो उसका क्रोध दूना हो गया। उसे अपनी प्रतिज्ञा भी याद आई। भीमसेन को लगा कि आज प्रतिज्ञा पूरी करने का अवसर आ पहुँचा है।

दुःशासन ने भी उसे खूब ताने दिए और बोला, "तुम लोग निर्लज्ज हो! द्रौपदी के साथ तुम लोगों ने अन्याय किया है। हमने तुम्हें दास बनाकर छोड़ा है।" यह कहते हुए दुःशासन ने भीमसेन पर एक शक्ति चलाई। दूसरी ओर से भीमसेन ने भी खूब घुमाकर गदा की चोट की। गदा की चोट से दुःशासन का माथा फट गया और वह कुछ पीछे हट गया। दुःशासन का रथ भी चूर-चूर हो गया। धरती पर गिरा दुःशासन पीड़ा से व्याकुल होकर छटपटाने लगा। दुःशासन को

इस अवस्था में पड़ा हुआ देखकर पाण्डव-सेना हर्ष से सिंहगर्जना करने लगी।

भीमसेन ने भी खूब सिंहगर्जना की। भीमसेन अपने रथ से उतरकर बड़े वेग से दुःशासन की ओर दौड़ा। इस समय कौरवों द्वारा दिए गए कष्टों और किए गए छल-कपटों को याद कर भीमसेन में उसके प्रति गहरी घृणा भरी हुई थी। भीमसेन ने कौरव-पक्ष के जीवित बचे प्रमुख वीरों दुर्योधन, कर्ण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा को सम्बोधित करते हुए कहा, "अभी मैं इस पापी दुःशासन को मारे डालता हूँ। तुम सारे मिलकर भी उसकी रक्षा कर सको तो करो!" यह कहकर भीमसेन ने दुःशासन को धर दबोचा और पूछा, "अरे दुष्ट! आज ज़रा बता कि रानी द्रौपदी के केश तुमने किस हाथ से खींचे थे?" फिर भीमसेन ने दुःशासन की छाती पर चढ़कर उसे दोनों हाथों से पकड़ लिया। सिंहगर्जना करके सबको सुनाते हुए कहा, "आज दुःशासन की बाँह उखाड़ी जा रही है। यह जीवन के अन्तिम साँस ले रहा है। जिस किसी भी कौरव-वीर में दम हो, वह मेरे हाथों मरते इस पापी को बचा ले!"

फिर क्या था, एक ही झटके में भीमसेन ने दुःशासन की बाँह उखाड़ डाली। फिर उसी बाँह से

भीमसेन दुःशासन को पीटने लगा। जब इतने पर भी भीमसेन का क्रोध शान्त नहीं हुआ तो वह फिर दुःशासन की छाती पर जा बैठा और तलवार से दुःशासन का सिर काटकर उसके गर्म-गर्म लहू के कुछ घूंट पी डाले, क्योंकि भीमसेन ने ऐसी ही प्रतिज्ञा की हुई थी।

दुःशासन प्राणहीन युद्ध-भूमि में पड़ा था। उसे मरा जानकर अभी भी क्रोध में भरे भीमसेन ने कहा, "मौत से तुझे मोठी नींद सुलाकर कष्ट से मुक्त कर दिया, नहीं तो मैं अभी तेरी और दुर्गत बनाता।"

जिन लोगों ने दुःशासन का रक्त पीते भीमसेन का विकराल रूप देखा था, वे भय के मारे भागने लगे और कहने लगे कि यह मनुष्य नहीं, राक्षस है!

खून से भीगे और लहू से लाल मुँहवाले भीमसेन ने श्रीकृष्ण और अर्जुन से कहा, "वीरो, दुःशासन के बारे में मैंने जो प्रतिज्ञा की थी, उसे आज सबके सामने सत्य कर दिखाया। अब यहीं दुर्योधन को काटकर उसकी बलि भी रणचण्डी को चढ़ाऊँगा। मेरी एक प्रतिज्ञा ही अभी पूरी हुई है। दूसरी अभी होगी।"

आज के युद्ध में कौरवों का सेनापति महारथी कर्ण भी अर्जुन के हाथों मारा गया। सेनापति कर्ण के मरते ही कौरव-सेना भाग खड़ी हुई। भागती हुई कौरव-सेना के हाथियों ने भागते हुए रथों को चूर-चूर कर दिया

और भागते हुए रथों ने अश्वारोहियों को कुचल डाला। अश्वारोहियों ने पैदल सैनिकों को रौंद डाला। जो थोड़े-से—पच्चीस हज़ार सैनिक एक ओर अभी जीवित बचे खड़े थे, उन्हें भीमसेन और धृष्टद्युम्न ने चारों ओर से घेर लिया। भीमसेन ने अपनी गदा से इन पैदल सैनिकों का कचूमर निकालना प्रारम्भ किया। भीमसेन इस समय यमराज की तरह भयंकर दिखाई दे रहा था। ये कौरव-पक्ष के बचे-खुचे पैदल सैनिक भी बड़ी वीरता के साथ लड़े। जैसे पतंगे तेजी से दीपक की लौ पर टूट पड़ते हैं, वैसे ही ये वीर भीमसेन पर टूट पड़े और वीरगति को प्राप्त हुए। भीमसेन ने पच्चीस हज़ार सैनिकों को मार डाला।

कौरव-सेना के जो वीर भाग रहे थे, उन्हें दुर्योधन ने कहा, "वीरो! तुम भय के मारे भाग रहे हो। परन्तु मुझे ऐसी कोई जगह दिखाई नहीं देती जहाँ भागकर छिप सको और भीमसेन या अर्जुन वहाँ न पहुँच सकें। ऐसी हालत में भागने से कोई लाभ तुम्हें नहीं होगा। पाण्डवों के पास तो अब बहुत ही थोड़ी सेना बच रही है। श्रीकृष्ण और अर्जुन भी घायल हो चुके हैं। मैं आज अर्जुन और भीम को मारकर विजय प्राप्त करूँगा। यदि तुम लोग अलग-अलग होकर भागोगे तो पाण्डव तुम सबका पीछा करके भेड़-बकरियों

की तरह तुम्हें मार डालेंगे। ऐसी मौत से युद्ध में लड़ते हुए वीरों की तरह मरना कहीं अच्छा है। हमारा शत्रु भीमसेन इस समय विजय के मद में चूर और क्रोध में भरा हुआ है। अपने कुल को कलंक मत लगाओ और पीठ पर घाव करवाने के बदले छाती तानकर शत्रु के सामने लोहे की दीवार बनकर डट जाओ।"

दुर्योधन के इस कुसमय के व्याख्यान को उन भागते हुए सैनिकों ने ज़रा-भर भी नहीं सुना। वे भागते गये और तब तक भागते गये जब तक उन्हें कोई सुरक्षित स्थान नहीं मिल गया या शत्रु-सैनिकों ने पीछे से प्रहार करके उन्हें गिरा नहीं दिया।

इस तरह सत्रहवें दिन का युद्ध समाप्त हुआ।

अठारहवें दिन कौरवों ने मद्रराज शल्य को अपना सेनापति बनाया। शल्य नकुल-सहदेव का सगा मामा था, किन्तु दुर्योधन के आतिथ्य-सत्कार से प्रसन्न होकर उसके पक्ष में हो गया था। पहले तो सेनापति शल्य ने पाण्डवों की सेना का बुरी तरह संहार किया, किन्तु दोपहर को युधिष्ठिर ने शल्य को मार गिराया।

शल्य के मारे जाने से सेनापति के बिना बची हुई कौरव-सेना कहाँ भाग गई, कुछ पता ही नहीं चला। प्रमुख वीरों में तो गिने-चुने लोग ही शेष बचे थे।

राजा दुर्योधन के सारे भाई मारे जा चुके थे। हाँ,

अब तक कौरव-पक्ष के कृपाचार्य, अश्वत्थामा, कृतवर्मा और दुर्योधन ही शेष बचे थे। दुर्योधन का लड़ने का सारा उत्साह समाप्त हो गया। एक तरह से कर्ण की मृत्यु के साथ ही वह निराश हो चुका था। उसे जिस कर्ण पर बड़ी आशा थी, वही न रहा, पितामह भीष्म और आचार्य द्रोण भी न रहे तो अब युद्ध कौन लड़े?

दुर्योधन ने युद्ध-क्षेत्र में जब अपने किसी भी सहायक को नहीं देखा, तब वह अकेला ही अपनी गदा को लेकर पैदल सरोवर की ओर भागा। दुर्योधन का हृदय क्षत्रियों के इस महान् घातक युद्ध से उत्पन्न शोक और ग्लानि से भरा था। दुर्योधन का शरीर भी क्षत-विक्षत था और मन की तो कुछ बात ही मत पूछिए। वह सरोवर में जाकर छिप गया। बात यह थी कि दुर्योधन जल-स्तम्भ-विद्या जानता था, जिसके द्वारा सिर से ऊपर तक पानी होने पर भी मनुष्य देर तक उसमें रह सकता है।

अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा भी दुर्योधन के पीछे-पीछे सरोवर पर पहुँचे। अश्वत्थामा की इच्छा थी कि वे चारों तब तक पाण्डवों से लड़ते रहें जब तक दोनों पक्षों में से एक पक्ष समाप्त नहीं हो जाता। दुर्योधन ने कहा, "मैं इस समय बहुत थका हुआ हूँ

और मेरा शरीर भी घावों से भरा हुआ है। मैं समझता हूँ कि आपकी भी यही स्थिति होगी। इस समय हम लोग थोड़ा विश्राम कर लें, प्रातः लड़ने चलें। इस समय मेरी जरा भी लड़ने की इच्छा नहीं है। कल हम चारों फिर से पाण्डवों के साथ युद्ध करके विजय प्राप्त करेंगे।"

पर अश्वत्थामा तो चाहता था कि अभी चलकर फिर से युद्ध किया जाय। जिस समय उनकी ये बातें हो रही थीं, उस सरोवर के किनारे जंगल से लौटे कुछ व्याध सुस्ताने के लिए खड़े थे। यद्यपि उन्हें दुर्योधन कहीं दिखाई नहीं दिया, पर दोनों ओर की बातचीत से उन्होंने अनुमान लगाया कि दुर्योधन यहीं कहीं छिपा हुआ है।

जब अश्वत्थामा आदि वहाँ से चले गए तो व्याधों की मण्डली भी वहाँ से नगर की ओर चल दी। उधर युधिष्ठिरादि पाण्डव दुर्योधन को खोजते फिर ही रहे थे। व्याधों ने सोचा कि यदि हम पाण्डवों को दुर्योधन का पता बताएँगे तो हमें बड़ा पुरस्कार मिलेगा, इसलिए उन्होंने भीमसेन को सरोवर के तट पर सुनी सारी बातें बता दीं।

भीमसेन ने व्याधों को बहुत-सा धन पुरस्कार में दिया और फिर युधिष्ठिर से सारी बात कह सुनाई।

युधिष्ठिर इस समाचार से बहुत प्रसन्न हुए। फिर तो श्रीकृष्ण को आगे करके युधिष्ठिरादि पाण्डव उस सरोवर के तट पर आ पहुँचे। उनके साथ अनेक लोग पीछे-पीछे चले आ रहे थे और शोर मचा रहे थे कि पापी दुर्योधन का पता लग गया! द्वैपायन नामक उस सरोवर के तट पर बड़ी भीड़ जमा हो गई।

दुर्योधन और भीमसेन का गदा-युद्ध

युधिष्ठिर ने जल में छिपे दुर्योधन को सम्बोधित करते हुए कहा, "राजा दुर्योधन! अपने भाइयों, मित्रों और ग्यारह अक्षौहिणी सेना को मरवाकर अपनी जान बचाने की इच्छा से इस सरोवर में क्यों घुसे बैठे हो? उठो, हम तुम्हारे साथ युद्ध करने आए हैं। आज तुम्हारी शूरवीरता, तुम्हारा अभिमान और तुम्हारी युद्धलिप्सा कहाँ चली गई?"

दुर्योधन ने पानी के भीतर से उत्तर दिया, "मैं अपनी जान बचाने के लिए यहाँ नहीं छिपा हूँ। मैं कुछ देर विश्राम करने की इच्छा से ही यहाँ आया हूँ। आप लोग भी थोड़ी देर सुस्ता लीजिए। फिर मैं युद्ध

करूँगा।"

युधिष्ठिर ने कहा, "हम बहुत सुस्ता लिये। कितनी देर से तुम्हें खोज रहे हैं। अब उठो और युद्ध करो! यदि तुम मरना नहीं चाहते हो तो मैं तुम्हें जीवन-दान भी दे सकता हूँ, पर इस बात का साफ-साफ फैसला होना चाहिए कि हममें से कौन जीता, कौन हारा?"

दुर्योधन ने कहा, "तुम सब लोग बड़ी संख्या में मुझसे युद्ध करने रथ, हाथी, घोड़े और पैदल सेना लेकर आए हो। मैं अकेला, थका हुआ तथा रथ-रहित हूँ। मेरे पास शस्त्रास्त्र भी नहीं हैं। ऐसी हालत में युद्ध कैसे कर सकता हूँ? हाँ, एक-एक करके मुझसे युद्ध करना चाहो तो कर सकते हो। तुम तो बड़े धर्मात्मा कहे जाते हो, फिर मेरी धर्मयुक्त बातें तुम्हारी समझ में क्यों नहीं आ रही हैं?"

युधिष्ठिर ने कहा, "बड़ी प्रसन्नता की बात है कि आज मैं तुम्हारे मुँह से धर्म की बात सुन रहा हूँ। यह तो और भी अच्छी बात है कि तुम्हारा विचार हमसे युद्ध करने का है। तुम्हारी शर्त हमें स्वीकार है। तुम जितने भी अस्त्र और शस्त्र माँगोगे, तुम्हें दिए जाएँगे और रथ भी। एक-एक के साथ युद्ध करने की बात भी हमें स्वीकार है। और भी सुन लो! हम

पाँचों में से यदि तुम किसी एक को भी मार गिराओगे तो हम अपनी हार मान लेंगे और तुम इस सारे राज्य के स्वामी बनोगे।"

दुर्योधन ने कहा, "ठीक है। मैं केवल गदा के साथ बिना रथ के युद्ध करना चाहता हूँ। तुममें से भी कोई एक मेरे साथ गदा-युद्ध करने के लिए आगे आये।" यह कहते हुए दुर्योधन कन्धे पर गदा थामे सरोवर से बाहर निकला। फिर दुर्योधन ने कहा, "बोलो, तुममें से कौन एक मुझसे गदा-युद्ध करने आगे आता है? मुझ कवचहीन और अकेले के साथ तुम सबका युद्ध करना तो अधर्म है।"

युधिष्ठिर बोले, "आज मौत को सामने देखकर ही तुम्हें धर्म और अधर्म का ज्ञान हुआ है। जब तुम बहुत-से महारथियों ने मिलकर अकेले अभिमन्यु को घेरकर मारा था, तब तुम्हारा धर्म कहाँ गया था? मीठा-मीठा गप्प और कड़वा-कड़वा थू! पापी, आज मौत की घड़ी में पहली बार तुम्हें धर्म का विचार आया?"

फिर पाण्डवों ने दुर्योधन को शिरस्त्राण और कवच धारण करने को दिया।

इसी समय श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को इस बात के लिए फटकारा, "तुमने यह बात क्यों कह दी कि हममें

से जिस किसी एक के साथ चाहो, गदा-युद्ध कर लो और उसको मार देने पर हम अपनी हार स्वीकार कर लेंगे ?"

बात यह थी कि पाण्डवों में भीमसेन ही था जो गदा-युद्ध में दुर्योधन का सामना कर सकता था। फिर श्रीकृष्ण ने बिगड़ते हुए कहा, "युधिष्ठिर, तुमने फिर से यह जुए से भी भयंकर शर्त क्यों लगाई ? दुर्योधन के साथ न्यायपूर्वक गदा-युद्ध करके तो भीमसेन भी नहीं जीत सकता। मुझे लगता है कि तुम लोग राज्य भोगने के अधिकारी ही नहीं हो। तुम्हारे भाग्य में तो वनवास ही लिखा है। बार-बार ठोकर खाने पर भी आप बिना सोचे-समझे काम करते हैं।"

भीमसेन ने आगे बढ़कर कहा,"श्रीकृष्ण ! मैं युद्ध में दुर्योधन को अवश्य मार गिराऊँगा, आप इस बात में ज़रा भी सन्देह न करें। मेरी गदा दुर्योधन की गदा से डेढ़ गुनी भारी है। आप यहाँ खड़े होकर युद्ध का तमाशा देखिए और मुझे युद्ध करने की आज्ञा दीजिए।"

श्रीकृष्ण भीमसेन की बात सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और बोले, "मैं मानता हूँ भीमसेन, तुम यह काम कर सकते हो। इस युद्ध को जीतना तुम्हारे बिना असम्भव है। तुम्हारे ही हाथों प्रायः सारे धृतराष्ट्र-पुत्र मारे गए हैं। इसे भी तुम्हीं मारो और अपनी प्रतिज्ञा को

पूरा करो। उसकी दोनों जाँघें तोड़कर उसे लूला बना दो !"

भीमसेन ने बड़े भैया युधिष्ठिर को सम्बोधित करते हुए कहा,"भैया ! आज मैं इस पापी को मारकर सारे वैर का अन्त करूँगा और आपके हृदय में चुभे काँटे को निकाल दूँगा। दुर्योधन की मृत्यु के साथ ही आज राज्य-लक्ष्मी आपका वरण करेगी। आज धृतराष्ट्र अपने अन्तिम पुत्र के लिए फूट-फूटकर रोएँगे।"

भीमसेन गदा उठाकर आगे बढ़ा और दुर्योधन को ललकारा। भीमसेन की ललकार से दुर्योधन का वीरत्व जागा और वह भी गदा-युद्ध के लिए तैयार हो गया।

भीम ने कहा,"अरे कुलघातक ! तेरी ही करतूतों के कारण आज भीष्म पितामह शर-शय्या पर पड़े हैं, हम लोगों के गुरु द्रोणाचार्य स्वर्ग सिधार गये हैं, कर्ण ने वीरगति पाई है, और तुम्हें पाप के गड्ढे में धकेलने वाला तुम्हारा मामा शकुनि भी मरा पड़ा है। तुम लोगों ने हमारे साथ जो कुछ छल-कपट और अत्याचार किए हैं उन्हें याद कर ले, क्योंकि अब तू थोड़ी ही देर का मेहमान है।"

दुर्योधन ने कहा, "अरे, गाल क्यों बजा रहा है ? जो मन में है, वह करके दिखा ! आज तुझे पता लग जाएगा कि कौन कितने पानी में है।"

कृष्ण के बड़े भाई बलराम गदा-युद्ध के पण्डित थे और भीम तथा दुर्योधन दोनों ही उनके योग्य शिष्य थे। उन्हें जब पता लगा कि दोनों शिष्यों में गदा-युद्ध होनेवाला है, तो वे भी वहाँ आ पहुँचे। पाण्डवों ने उनका हार्दिक स्वागत किया। गदा-युद्ध के लिए अखाड़े में उतरे हुए भीमसेन और दुर्योधन ने अपनी-अपनी गदाएँ उठाकर उन्हें प्रणाम निवेदित किया। फिर सभी गदा-युद्ध को देखने के लिए यथा-स्थान बैठ गए।

भीम और दुर्योधन का गदा-युद्ध प्रारम्भ हो गया। जब दोनों की गदाएँ आपस में टकरा जातीं तो बिजली की चमक और कड़क—दोनों बातें दिखाई और सुनाई देतीं। गदाओं की टकराहट से जो चिंगारियाँ निकलतीं, वे जुगनुओं की तरह आकाश में फैल जातीं। दोनों वीर घात-प्रतिघात से लहू-लुहान और थकान से चूर-चूर हो गए तो दो घड़ी तक विश्राम किया। तब दोबारा गदा-युद्ध प्रारम्भ हो गया। उन दोनों की पैंतरेबाजी, शत्रु के प्रहार को बचाकर उसपर प्रहार करने की कला देखते ही बनती थी। कभी एक आगे बढ़कर प्रहार करता तो कभी दूसरा।

दुर्योधन ने अपनी गदा से भीमसेन के मस्तक पर प्रहार किया, पर भीमसेन जरा-भर भी विचलित नहीं हुआ। फिर भीमसेन ने दुर्योधन पर वार किया, पर

दुर्योधन ने पैंतरा बदलकर वार बचा लिया। भीमसेन की गदा नीचे गिर पड़ी और दुर्योधन ने भीमसेन की छाती पर गदा का वार किया। भीमसेन इस प्रहार से क्षण-भर के लिए मूच्छित-सा हो गया। इस बार पाण्डवों को अपनी विजय में सन्देह होने लगा।

सँभलने पर भीमसेन ने दुर्योधन की पसलियों पर गदा का ज़ोरदार प्रहार किया। इस प्रहार से दुर्योधन धरती पर घुटने टेककर बैठ गया। दुर्योधन की ऐसी दशा देखकर पाण्डवों ने बड़े ज़ोर की सिंहगर्जना की। कुछ सँभलने पर दुर्योधन उठा और उसने भीमसेन के माथे पर पूरे ज़ोर से गदा का प्रहार किया। भीमसेन के माथे से खून की धार तो बहने लगी, पर उसने इसकी रत्ती-भर भी परवाह नहीं की और दुर्योधन पर गदा का ऐसा हाथ मारा कि वह कांपता हुआ पृथिवी पर गिर पड़ा; पर शीघ्र ही उठ खड़ा हुआ। फिर उसने भीमसेन पर गदा-प्रहार करके उसे गिरा दिया। इस चोट से भीमसेन का कवच टूट गया। भीम की आँखें खून की धारा से ढक गईं। उसने हाथ से खून को पोंछा और फिर उठ खड़ा हुआ।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा, "अर्जुन! यद्यपि बल में भीमसेन दुर्योधन से बढ़-चढ़कर है, किन्तु जहाँ तक अभ्यास की बात है, दुर्योधन का कोई मुकाबला नहीं।

मैं समझता हूँ कि यदि भीमसेन कायदे से गदा-युद्ध करता रहा तो दुर्योधन को कभी नहीं जीत सकता। इसलिए इस समय भीमसेन को इस बात को याद दिलाने की आवश्यकता है कि उसने दुर्योधन की टाँगें तोड़ने की प्रतिज्ञा की हुई है और उस प्रतिज्ञा को पूरा करने का यही समय है। शठ के साथ शठता का ही व्यवहार सच्ची राजनीति और रणनीति है। इस समय धर्म-अधर्म की बातें सोचना व्यर्थ है। यदि भीमसेन को कुछ हो गया तो सारा खेल बिगड़ जाएगा, क्योंकि युधिष्ठिर ने फिर बिना सोचे-समझे कह दिया है कि एक के भी मरने पर हार मान लेंगे।"

भगवान् श्रीकृष्ण के कथन का आशय समझकर अर्जुन ने भीमसेन को दिखाकर अपनी बाईं जाँघ को ठोका। इस संकेत को भीमसेन ने देख भी लिया और समझा भी।

दोनों वीर थक गए थे, इसलिए दो घड़ी तक विश्राम करने बैठ गए और फिर गदा-युद्ध का तीसरा दौर प्रारम्भ हुआ।

दुर्योधन ने गदा-प्रहार करके भीम को एक बार फिर गिरा दिया। इस समय यद्यपि भीमसेन की स्थिति बहुत खराब थी, पर उसने दुर्योधन को इस बात का पता नहीं लगने दिया। दुर्योधन समझ गया था कि

अब भीमसेन मुझपर प्रहार करेगा। उसने सोचा कि मैं खड़ा रहूँगा; और जब प्रहार होगा तो एकदम ऊपर को उछलकर प्रहार को बेकार कर दूंगा। उसके खड़े होने के ढंग से भीमसेन ने भी अनुमान लगा लिया कि दुर्योधन इस तरह वार को बचाना चाहता है, इसलिए उसने सारा हिसाब लगाकर ऐसी गदा चलाई कि ऊपर उछलते दुर्योधन की टांगें तोड़ डालीं। टांगें टूटने से दुर्योधन धरती पर आ गिरा।

दुर्योधन के गिर पड़ने पर पाण्डव बड़े प्रसन्न हुए और पास जाकर उसे देखने लगे। भीमसेन भी दुर्योधन के पास गया और बोला, "पापी, आज तेरे सारे पापों का दण्ड मैंने तुझे दे दिया।" यह कहकर भीमसेन ने उसके मुकुट और माथे पर ठोकर मारी। फिर भीमसेन ने उसे कहा, "दूसरों को विष देनेवाले, हत्या का षड्यन्त्र करनेवाले, दूसरों को जीतेजी जलानेवाले, छल-कपट से दूसरों का माल हड़पनेवाले और स्त्रियों का अपमान करनेवालों का अन्त ऐसा ही होता है।"

धर्मराज युधिष्ठिर और कुछ दूसरे लोगों को भी भीमसेन का ठोकर मारना अच्छा नहीं लगा। उन्होंने भीमसेन को रोका।

उधर दुर्योधन को गदा-युद्ध के नियमों का उल्लंघन करके मारा गया देखकर बलराम जी का क्रोध भड़क

उठा। उन्होंने भीमसेन को बार-बार धिक्कारा और नाभि से नीचे गदा-प्रहार करने के लिए भी फटकार सुनाई। फिर वे श्रीकृष्ण से बोले, "श्रीकृष्ण, राजा दुर्योधन गदा-युद्ध में मुझ-जैसा ही वीर था। भीमसेन ने गदा-युद्ध के नियमों को तोड़कर उसकी टाँगों पर प्रहार किया है, जो अनुचित है। यह सब मेरी आंखों के सामने, मेरे देखते-देखते हुआ है। मैं इसे अपना अपमान समझता हूँ।" ऐसा कहते हुए बलराम अपना हल उठाकर भीमसेन को मारने दौड़े।

श्रीकृष्ण ने बड़े परिश्रम से बलराम को दोनों बाहों में पकड़कर रोका। फिर समझा-बुझाकर शान्त करने लगे।

बलराम जी बोले, "श्रीकृष्ण! तुम धर्म की मनमानी व्याख्या करते हो। यह ठीक नहीं है। तुम्हारी बातें मुझे मान्य नहीं हैं।"

श्रीकृष्ण बोले, "भैया, इस हत्यारे ने अभिमन्यु को कैसे मारा था, यह क्या आपको मालूम नहीं है? इस पापी दुर्योधन का तो सारा जीवन ही पापपूर्ण रहा है।"

इसपर भी बलराम जी को सन्तोष नहीं हुआ। वे बोले, "भीमसेन ने अधर्मपूर्वक दुर्योधन को मारा है, इसमें मुझे किसी गवाही की जरूरत नहीं है।" यह

कहते हुए वे रथ पर बैठकर द्वारका चले गए।

भीमसेन हाथ जोड़कर युधिष्ठिर से बोले, "महाराज! यह सारी पृथिवी आज से आपकी हो गई। इसके काँटे नष्ट कर दिए गए। अब आप इसका शासन तथा धर्मराज्य का प्रवर्तन कीजिए। आपके समस्त शत्रु यमलोक को सिधार गए हैं। यह वसुन्धरा आपकी सेवा में प्रस्तुत है।"

युधिष्ठिर बोले, "कृष्ण के पथ-निर्देशन में हमने शत्रुओं पर विजय पाई है। बड़े सौभाग्य की बात है कि तुम विजयी हुए हो। मैं इसे भाग्य की ही बात मानता हूँ। तुम्हारी प्रतिज्ञा पूर्ण हुई, यह भी बड़ी प्रसन्नता की बात है।"

दुर्योधन को गदा-युद्ध में मार गिराने के लिए पाण्डव-पक्ष के अनेक वीर भीमसेन का अभिनन्दन करते हुए बोले, "आपने आज दुष्कर पराक्रम कर दिखाया है। आपके सिवा दूसरा कोई भी वीर दुर्योधन को गदा-युद्ध में पछाड़ नहीं सकता था। आपने दुर्योधन और दुःशासन को मारकर पृथिवी का भार हल्का किया है और महाराज युधिष्ठिर के राज्य को निष्कंटक बनाया है। जैसे सिंह भैंसे को मारकर उसके रक्त का पान करता है, वैसे ही आपने दुःशासन को मारकर उसके रक्त का पान किया है। जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर को मारकर कीर्ति

प्राप्त की थी, वैसी ही कीर्ति आपने भी प्राप्त की है।"

श्रीकृष्ण पास खड़े इन सब बातों को सुन रहे थे। उन्होंने कहा, "अरे, इस मरे हुए शत्रु को दोबारा क्यों मार रहे हो? अब दुर्योधन को बुरा-भला कहना छोड़ो! यह पापी तो उसी समय मर चुका था, जब इसने अपने बड़ों और गुरुओं का कहना मानना छोड़ दिया था। महात्मा विदुर, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और पितामह भीष्म के बार-बार समझाने पर भी इसने पाण्डवों को उनका पैतृक अधिकार नहीं दिया। यह दम तोड़ता दुष्ट अब न किसी का मित्र है, न शत्रु।"

अपने जीवन की अन्तिम घड़ियाँ गिनते दुर्योधन ने श्रीकृष्ण के वचन सुने तो जलभुन गया। वह किसी तरह उकड़ूँ बैठकर श्रीकृष्ण से बोला, "कृष्ण! मैं जानता हूँ कि तुम्हारे ही कहने से मुझे अधर्मपूर्वक मारा गया है। सारे महाभारत में तुमने यही किया है। शिखण्डी को आगे करके, उसकी आड़ लेकर अर्जुन ने तुम्हारे ही कहने से भीष्म पितामह को मारा था। तुम्हारे ही कहने से धृष्टद्युम्न ने समाधिस्थ आचार्य द्रोण का सिर काट डाला था और तुम्हारे ही कहने से अपने धँसे पहिये को निकालते कर्ण पर अर्जुन ने प्रहार किया था। झूठी प्रतिज्ञा करनेवाले, तुमने शस्त्र न उठाने की प्रतिज्ञा करके जो उसे तोड़ा, तुम्हें इसके लिए क्या लज्जा का

अनुभव नहीं होता ?"

वासुदेव श्रीकृष्ण ने भी उसके छल-कपट और पापाचरण का कच्चा चिट्ठा उसके सामने रखा।

इसी समय दुर्योधन के प्राणपखेरू उड़ गए। पाण्डव-पक्ष ने जोर की शंखध्वनि की। श्रीकृष्ण ने अपना पांचजन्य नामक शंख, अर्जुन ने देवदत्त नामक शंख और युधिष्ठिर ने अनन्तविजय नामक शंख को बजाकर अपनी विजय-घोषणा की।

महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया। हस्तिनापुर के राज्य-सिंहासन पर महाराज युधिष्ठिर का राज्याभिषेक सम्पन्न हुआ। परन्तु राज-काज करते हुए भी पाण्डवों के मन से ग्लानि दूर नहीं हुई। युधिष्ठिर बार-बार इस राज्य को छोड़कर भगवद्-भक्ति के लिए तपोवन में जाने की बात करते रहते। अन्त में अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित का राज्याभिषेक करके द्रौपदी-सहित पाँचों पाण्डवों ने हिमालय पर जाने का निश्चय किया।

दूसरे दिन पाँचों पाण्डव और द्रौपदी हिमालय की यात्रा के लिए निकल पड़े।

वे कई दिनों तक यात्रा करते रहे और अन्त में यात्रा करते-करते एक-एक करके स्वर्ग सिधार गए।

□□□